लूटो जेम्स का मज़ा!
जीतने के लिए, १००१ मज़ेदार पुरस्कार!
खाली जगह की संख्या बताओ?
16
28
41
58
37
49
62
?
Cadbury's
MILK CHOCOLATE
GEMS
जल्दी करो!
अपना उत्तर, कॅडबरिज़ जेम्स के एक खाली प्लास्टिक पैकेट के साथ भेजो। पहले १००१ सफल प्रतियोगियों को ११ रुपये मूल्य का स्टेट बैंक गिफ्ट चेक मिलेगा।
अपना उत्तर, नाम और पते के साथ केवल अंग्रेजी में और बड़े (ब्लॉक) अक्षरों में लिखो।
प्रवेश-पत्र इस पते पर भेजो :
"लूटो जेम्स का मज़ा" डिपार्टमेंट C–21
पोस्ट बॉक्स नं. ५६, थाने ४००६०१
प्रवेश-पत्र पहुंचने की अंतिम तिथि:
30–6–1977
चॉकलेट से भरे रंगीन कॅडबरिज़ जेम्स
CHAITRA-C-69 HIN
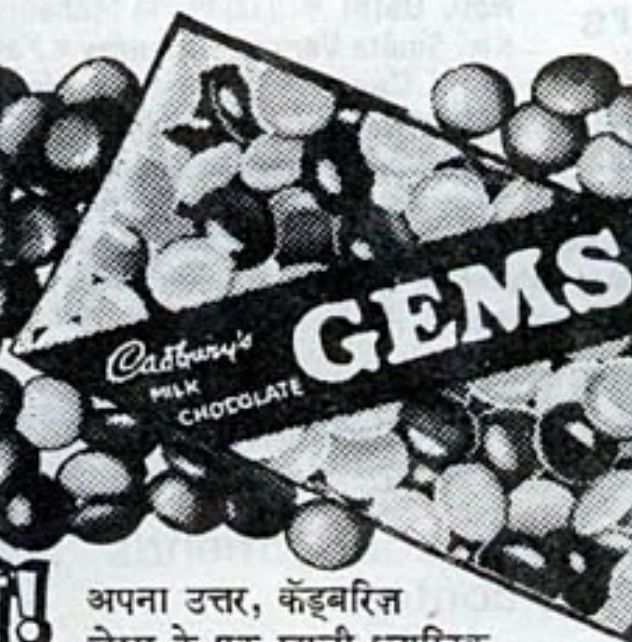
चन्दामामा

संस्थापक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

इस महीने की बेताल कथा "विश्वकर्म का शाप" है। सामाजिक कलाओं के अनेक प्रयोजन होते हैं। उनके द्वारा कलाकार यश, राजा का सम्मान, जनता का आदर तथा धन की प्राप्ति भी करते हैं। जनता को उन कलाओं द्वारा अत्यधिक संस्कृति भी उपलब्ध होती है। कभी कभी महान कलाकारों के द्वारा देश को अंतर्राष्ट्रीय ख्याति भी उपलब्ध होती है। इसके उदाहरण के रूप में महर्षि रवीन्द्र ठाकुर और प्रेमचन्द को भी ले सकते हैं। परंतु जो कलाकार केवल अपने स्वार्थ के वास्ते कला की आराधना करते हैं, वे सच्चे कलाकार नहीं होते।

वर्ष : २९ जून १९७७ अंक : १०

एक प्रति : १-२५ : : वार्षिक चन्दा : १५-००

प्रशमश्च, क्षमाचैव,
आर्जवम्, प्रियवादिता
असामर्थ्यम् फलम् त्यंते
निर्गुणेषु सतां गुणाः ॥ १ ॥

[सत्पुरुषों की शांति भावना, सहनशीलता, सचाई और मधुर वार्तालाप दुष्टों के लिए असमर्थता के लक्षण प्रतीत होते हैं।]

आत्म प्रशंसिनम्, दुष्टम्,
धृष्टं, विपरिधावकम्,
सर्वत्रोत्सृष्टदण्डम् च,
लोक स्सत्कुरुते नरम् ॥ २ ॥

[जो आत्मस्तुति करते हुए दुष्ट, क्रूर तथा सब को सतानेवाला होता है, उसी का आदर संसार करता है।]

न साम्ना शक्यते कीर्तिः,
न साम्ना शक्यते यशः,
प्राप्तुम् लक्षण लोकेस्मिन्
जयो वा रणमूर्धनि ॥ ३ ॥

[हे लक्ष्मण! इस संसार में कीर्ति, यश तथा युद्ध में विजय भलाई से ही प्राप्त होती हैं।]

बुराई से लाभ

[४७]

कौओं के राजा मेघवर्ण ने अपने पाँचों मंत्रियों के विचार जानने के बाद वृद्ध ज्ञानी स्थिरजीवी से उनका विचार जानना चाहा, तब उन्होंने यों कहा :

"बेटा! हमने पाँचों के जो विचार सुने, वे सब प्रसिद्ध राजनीति के शास्त्रों में बताये गये हैं। यदि हालत कुछ और प्रकार की होती तो वे सलाहें उपयुक्त होतीं, लेकिन आज की स्थिति में हमारा शत्रु बलवान है, इसलिए नयनीति अथवा नयवंचना ही उपयुक्त होंगी। अन्य पाँचों उपायों द्वारा हमें जो विजय उपलब्ध न होगी, वह इन उपायों द्वारा वर्तमान स्थिति में प्राप्त होगी। दुश्मन के निवास पर निगरानी रखकर अगर हम अपने में से एक व्यक्ति को बलि होने के लिए मनवा लेंगे तो हम शत्रु का विनाश कर सकते हैं।"

इस पर मेघवर्ण ने पूछा-"पितृतुल्य हे महानुभाव! कौओं तथा उल्लुओं के बीच इस प्रकार गहरी दुश्मनी पैदा होने का कारण क्या है?"

स्थिरजीवी ने यों समझाया : एक बार जंगल से हंस, बक, कोयल मोर, चातक, कबूतर, गीध इत्यादि पक्षियों ने एक सभा बुलाकर आपस में इस प्रकार चर्चा की :

"गरुड़ हमारे राजा हैं, लेकिन उनका सारा समय भगवान विष्णु की सेवा में व्यतीत होता है। ऐसे राजा के द्वारा हमारा क्या प्रयोजन सिद्ध हो सकता है? जाल बिछाकर लोग हमें फँसाते हैं, मार डालते हैं, फिर भी हमारे राजा हमारी रक्षा नहीं करते! जो राजा जनता के भय को दूर करके उनकी रक्षा रक्षा नहीं

करते, वे तो मृत्यु तुल्य हैं। इसलिए हम एक दूसरे राजा को चुन लेंगे।"

इस पर सभी पक्षियों ने सोचा कि उल्लू तो देखने में गंभीर दिखाई देता है, उसी को हम अपना राजा चुन ले। इस पर उल्लू के राज्याभिषेक के लिए आवश्यक सारी सामग्री इकट्ठी की गई। पवित्र नदियों के जल मंगाये गये। सिंहासन तैयार करके उस पर बाघ की खाल बिछाई गई। ब्राह्मणों को प्रदान करने के लिए दक्षिणा इकट्ठी की गई। पक्षियों ने स्त्रोत्र पाठ पढ़े। ब्राह्मणों ने वेदों का पाठ किया, कर्पूर जला कर आरती ली गई। मंगल वाद्य बज उठे।

उल्लू और उसकी ज्येष्ठ पत्नी सिंहासन पर आसीन हुए। अभिषेक का कार्य संपन्न होने जा रहा था, तभी कौए का कर्कश स्वर सुनाई दिया। क्योंकि कौआ उसी वक़्त आ पहुंचा था।

उसने मन में सोचा–'सारे पक्षी यहाँ पर क्यों जमा हुए हैं? कोई पर्व-त्योहार तो नहीं मना रहे हैं?'

कौए को देख अन्य पक्षियों ने सोचा–'सभी पक्षियों में कौआ ज्यादा अक्लमंद है। मानवों में नाई, जानवारों में सियार और सन्यासियों में श्वेतांबर अधिक अक़्लमंद होते हैं। इसलिए राजा के चुनाव के संबंध में हमें कौए का भी विचार जान लेना चाहिए।"

इस बीच कौए ने पक्षियों के निकट पहुँच कर पूछा–"यह सभा कैसी? आप लोग कोई उत्सव मना रहे हैं?"

पक्षियों ने यों उत्तर दिया:

"सुनो तो सही। इस वक़्त पक्षियों के कोई राजा नहीं हैं। इसलिए सभी पक्षियों नें मिलकर उल्लू को राजा चुना और आज राज्याभिषेक करना चाहा। इस संबंध में तुम्हारा क्या विचार है? तुम तो समय पर आ पहुंचे।"

इस पर कौए ने मुस्कुरा कर कहा–"हंस, मोर, कोयल, तोता जैसे बड़े पक्षी

हैं जो ज्ञानी भी हैं, उनके रहते इस भयंकर पक्षी को जो दिन में देख तक नहीं पाता, आप लोगों ने राजा कैसे चुना? आप लोगों का यह निर्णय सही नहीं है, मैं इसे मान नहीं सकता।"

आगे उसने यों कहा–"उल्लू की नाक ठेढी है, आँख कानी है, देखने में भी भयंकर और घृणा पैदा करनेवाला होता है। ऐसी हालत में आप ही लोग सोचिये, इस उल्लू को राजा बनाने पर हमारा क्या भला होगा? अगर थोड़ी देर के लिए हम यह मान भी ले कि उल्लू के सभी लक्षण अच्छे ही हैं, लेकिन गरुड़ के रहते हमें कभी दूसरे राजा का चुनाव नहीं करना चाहिए। एक ही राजा के अधीन में राज्य की उन्नति हो सकती है। गरुड़ का नाम सुनते ही आपके शत्रु भाग जाते हैं, बड़े का नाम सुनाने पर दुष्ट कांप उठते हैं। प्राचीन काल में खरगोश चांद को अपने राजा घोषित कर क्या सुखी नहीं हुए?"

"वह कैसी कहानी है?" पक्षियों ने कौए से पूछा।

कौए ने उन्हें "चांद सरोवर" की कहानी यों सुनाई।

एक जंगल में चतुर्दंत नामक हाथियों का एक बहुत बड़ा राजा था। उसके आश्रय में कई हाथी सुरक्षित थे। चतुर्दंत भी अपने अनुचरों की अच्छी तरह से रक्षा करता था।

एक बार लगातार बारह वर्ष तक अकाल पड़ा। गड्ढे, तालाब, सरोवर आदि सब सूख गये। इस पर हाथियों ने अपने राजा से निवेदन किया–"राजन्, प्यास के मारे छोटे-छोटे हाथी मरते जा रहे हैं। कृपया हमारी प्यास बुझाने लायक़ कहीं कोई सरोवर हो तो दिखा दीजिए।"

चतुर्दंत ने तत्काल तेज़ी से दौड़नेवाले हाथियों को आठों दिशाओं में भेज कर पानी का पता लगाने का आदेश दिया। पूर्वी दिशा में जो हाथी गये, उन्हें चांद सरोवर दिखाई पड़ा।

१८५. लिंग पर्वतीय मंदिर

लाओस वालप के निकट यह लिंग पर्वतीय मंदिर था। ब्राह्मणों के त्यागने के बाद बौद्धों ने उसका उपयोग किया। मीकांग नदी के समीप में स्थित एक पर्वत के पास ब्राह्मणों के लिए पवित्र एक स्त्रोत था जो बाद को बौद्धों के लिए स्नान तथा शौचालय के काम में आया।
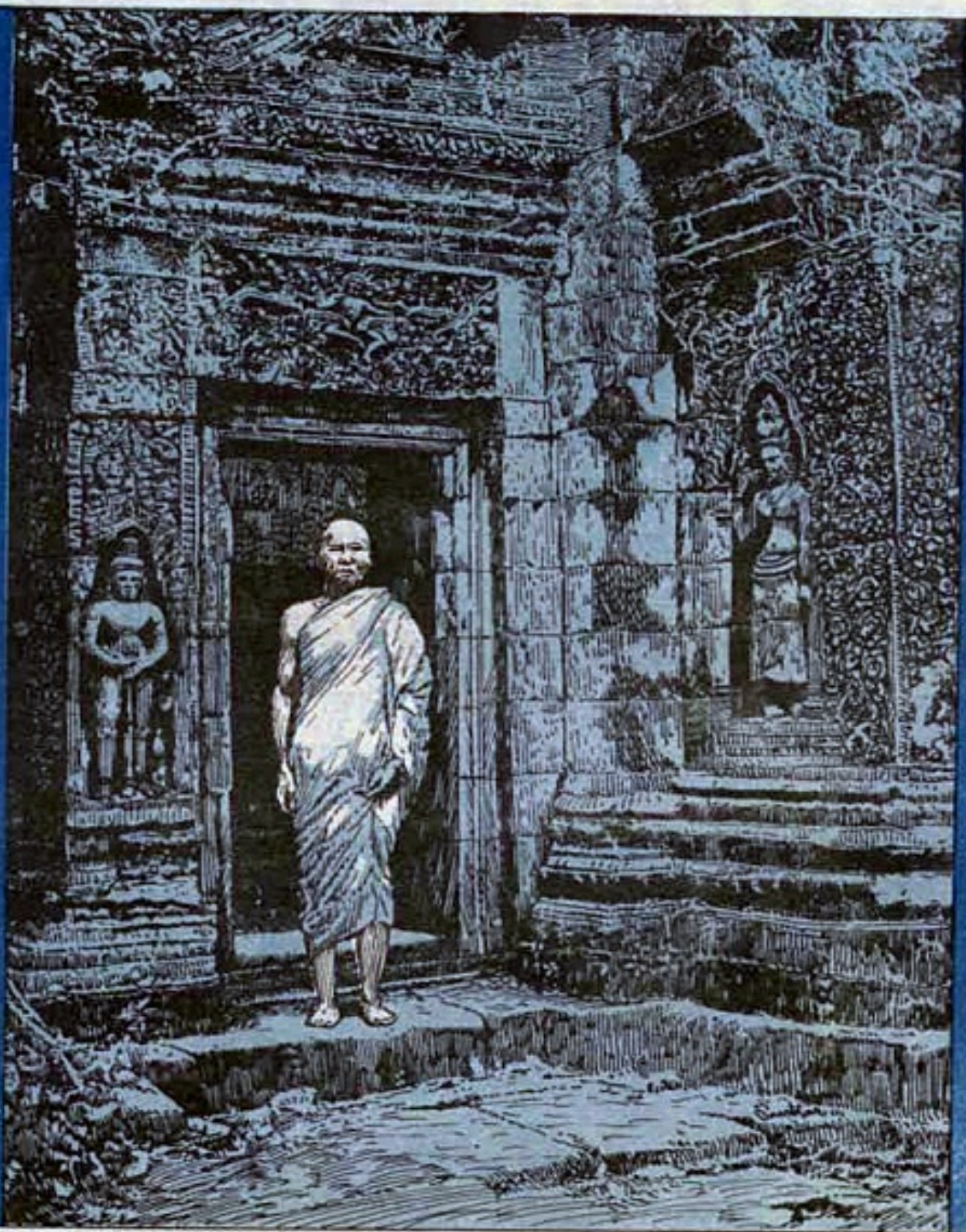
माया सरोवर

[१७]

[कृपाणजित ने अपनी युक्तिपूर्ण बातों से गढ़वाल दुर्ग के नाटे लोगों को विश्वास दिलाना चाहा। लेकिन उसका वध कराने के ख़्याल से शंकरसिंह ने उस झोंपड़ी में आग लगवा दी, जिसमें कृपाणजित सो रहा था। पर कृपाणजित झोंपड़ी से बाहर निकला और नाटे लोगों को पीटने लगा। जंगल के दो विचित्र मनुष्यों ने इस दृश्य को देखा। बाद...]

जंगल में प्रवेश करनेवाले दो विचित्र मनुष्यों ने नाटी जाति की बस्ती की ओर विस्मयपूर्वक देखा। इसके उपरांत उनमें से एक ने अपने म्यान से तलवार निकाली और दूसरे से कहा–"भाई सर्पनख! लगता है, उस बस्ती को कोई दुश्मन घेरकर उजाड़ रहे हैं।"

ये बातें सुन सर्पनख जरा भी विचलित हुए बिना बोला–"हे सर्पस्वर! उस बस्ती को उजाड़ने दो। हम किस लोक के लोग हैं और यह कौन-सा लोक है? हमें क्या मतलब है इन लोगों के साथ? हमें अपने काम से मतलब है न? हम अपने घोड़ों की टापों के घिसने लायक़ इन जंगलों और पहाड़ों की धूल क्यों छान रहे हैं?"

"भाई, आप का कहना सच है। लेकिन मेरे मन में एक संदेह हो रहा है!" इन शब्दों के साथ सर्पस्वर घोड़े पर खड़ा हो

गया। उछलकर पकड़ में आनेवाली डाल पकड़कर लटकते हुए बस्ती की ओर देख बोला–"भाई, यह तो बड़ा ही अश्चर्यजनक प्रतीत हो रहा है। एक भयंकर नर वानर और एक साधारण आदमी दोनों मिलकर नाटे लोगों का सर्वनाश कर रहे हैं। हम दोनों इस अत्याचार को देखते हुए कैसे चुप रह सकते हैं?"

"ऐसी बात है! तब तो उस नर वानर तथा उस आदमी को भी प्राणों के साथ बन्दी बनाने की नितांत आवश्यकता है। उस आदमी के द्वारा हमारे खोये हुए साथी का शायद पता लग जाय!" ये शब्द कहते हुए सर्पनख ने अपने घोड़े को हांक दिया। जीन से लटकनेवाले कमल-नालों के रस्से को अपने हाथ में थाम लिया।

इसके बाद वे दोनों तेजी के साथ अपने घोड़ों पर शंकरसिंह की बस्ती में पहुंचे। उस वक्त नर वानर अपने मजबूत हाथों से बस्ती की झोंपड़ियों को धक्के देकर गिरा रहा था। कृपाणजित पागल की भांति अपने ऊपर हमला करनेवाले नाटे लोगों को पेड़ की डाल से पीट रहा था।

"भाई सर्पनख! मैं इस नर वानर के साथ जूझ पड़ूंगा, तुम उस जबर्दस्त मानव को पकड़कर बन्दी बनाओ।" इन शब्दों के साथ सर्पस्वर ने अपने घोड़े को नर वानर की ओर दौड़ाया।

सर्पनख ने कमल नालों के रस्से को उठाया, उसके फंदे को कृपाणजित के कंठ की ओर फेंकते चिल्ला उठा–"माया सरोवरेश्वर की जय!"

विचित्र घोड़ों पर आकर अचानक हमला करनेवाले सर्पनख तथा सर्पस्वर को देख नाटी जाति के लोग और कृपाणजित भी चकित हो जड़वत हो गये। सर्पनख के द्वारा फेंका गया कमल नालों का रस्सा कृपाणजित के कंठ में लिपट गया। उसका फंदा कृपाणजित के कंठ को कसने ही जा रहा था कि वह चीख उठा–"महाशय, मुझे मत मारो। तुम जैसा एक व्यक्ति

एक बार एक विचित्र हाथी पर सवार हो इधर आया था, मैंने उनकी बड़ी मदद पहुंचाई है, इसलिए मुझ पर रहम कर प्राणों के साथ मुझे छोड़ दो।"

ये बातें सुन सर्पनख विस्मय में आकर बोला—"इसका मतलब है कि तुम मकर केतु को जानते हो! वह तो बहुत ही बड़ा योद्धा है। उसने तुम्हारी मदद ली है तो इसका यही अर्थ होगा कि आखिर वह किसी बड़ी विपदा में फँस गया होगा। तब तो जल्दी बताओ, मकर केतु इस वक़्त कहाँ पर है?"

कृपाणजित ने अपने दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम करते हुए पूछा—"लगता है कि आप का यह फंदा मेरे कंठ को कसता जा रहा है, इसलिए मेरे मुंह से बोल नहीं फूट रहे हैं। क्या आप यह फंदा थोड़ा ढीला करने की कृपा करेंगे?"

"अच्छी बात है! मगर यदि तुमने भागने की कोशिश की तो यह फंदा तुम्हारे लिए काल का पाश बन जाएगा; समझें?" सर्पनख ने यों चेतावनी दे धमकी भरे शब्दों में उत्तर दिया।

कृपाणजित ने कमल नालोंवाले रस्से को अपने दोनों हाथों से पकड़कर फंदे को थोड़ा ढीला किया। एक बार गहरी साँस लेकर कहा—"महाशय, मैं ~~यह~~ नहीं जानता कि इस वक़्त मकर केतु कहाँ पर है परंतु आप लोगों को देखने के बाद सारी हालत अब मेरी समझ में आ रही है। थोड़े दिन पूर्व अमरावती नगर का निवासी जयशील तथा उसके एक कापालिक मित्र ने मिलकर मकर केतु को इस जंगल में नाना प्रकार से सताया था। यह बात मैंने जंगल के निवासियों द्वारा जान ली है।"

यह उत्तर सुनकर सर्पनख ने क्रोध में आकर कहा—"अरे दुष्ट! मेरे सवाल का यही उत्तर है? तुमने अभी अभी बताया कि तुमने मकर केतु की बड़ी मदद की है। मैंने यही पूछा कि वह इस वक़्त कहाँ पर

है? तुम बेकार की बातें सुनाकर हमारा वक़्त बरबाद क्यों करते हो?"

कृपाणजित ने अपनी जान बचाने के लिए झूठ-मूठ कह दिया था कि वह मकर केतु को जानता है, मगर वास्तव में उसने मकर केतु को कभी देखा तक न था। वहाँ के जंगलियों द्वारा उसने मकर केतु के बारे में थोड़ा-बहुत सुन रखा था।

इसलिए कृपाणजित मन ही मन यही सोचने लगा कि इस बार पुनः कोई झूठ बोलकर अपनी जान कैसे बचा ले। पर उस समय नाटी जाति के लोग एक साथ ठठाकर हँस पड़े। सर्पनख ने उनकी ओर क्रोध भरी दृष्टि दौड़ाई। इस पर शंकरसिंह ने झुककर उसे प्रणाम किया और कहा-"जलाश्व योद्धाजी! आप इस दुष्ट के साथ बातचीत करते हुए यह बात बिलकुल भूल गये कि आप के साथी के साथ क्या बीत रहा है?"

शंकरसिंह की ये बातें सुनने पर सर्पनख को अपने छोटे भाई सर्पस्वर की याद हो आई। उसने सिर उठाकर इधर-उधर देखते हुए पुकारा-"सर्पस्वर! तुम कहाँ हो? नर वानर का क्या हुआ?"

पर बड़ी देर तक उसकी पुकार का कोई जवाब न मिला। तब सर्पनख ने दाँत किटकिटाते नाटी जाति के लोगों की ओर देखा। वे सब सिर झुकाये अपनी दृष्टि जमीन पर टिकाये हुए थे।

"अरे कमबख्त नाटे लोग! सर झुकाये देखते क्या हो? आखिर क्या हो गया है?" यों सर्पनख ने नाटे लोगों से गरजकर पूछा।

शंकरसिंह ने सर उठाकर नम्र शब्दों में उत्तर दिया-"हे जलाश्व योद्धाजी! तुम्हारा भाई और नर वानर उन घनी झाड़ियों की ओर चले गये हैं। जलाश्व दूसरी ओर दौड़कर चला गया है। वह नर वानर इस दुष्ट कृपाणजित का पालतू जानवर है। वह इसके आदेश के बिना ही इसके मन की बातों को भांपकर इसकी आज्ञाओं

का पालन करता है। इसी ने संभवतः नर वानर को संकेतों द्वारा आदेश दिया होगा कि आप के भाई की गर्दन पकड़कर उठा करके कंधे पर डाल जंगल में भाग जावे!"

"अरे दुष्ट! तुमने इस खतरे की बात को कैसे इतमीनान से सुनाया?" इन शब्दों के साथ सर्पनख पीड़ा के मारे चिल्ला उठा। तब कृपाणजित के कंठ में कसनेवाले कमल नालोंवाले फंदे को शंकरसिंह के हाथ देकर बोला-" इस दुष्ट को भागने से रोकने की जिम्मेवारी तुम्हारी है। मैं अभी उस नर वानर का वध करके अपने छोटे भाई को छुड़ा लाऊँगा।" इन शब्दों के साथ जलाश्व को हांककर तेजी के साथ घनी झाड़ियों की ओर बढ़ा।

नाटी जाति की बस्ती में उठनेवाले धुएँ को जयशील और सिद्ध साधक ने देखा, साथ ही कृपाणजित तथा नर वानर के साथ शंकरसिंह के अनुचरों के लड़ने का कोलाहल भी सुना। इसका कारण जानने के लिए जयशील ने नाटी जाति के सेनापति को भेजा।

नाटी जाति का सेनापति अपने दो अनुचरों को साथ ले पहाड़ पर पहुँचा और वहाँ से उसने शंकरसिंह की बस्ती को देखा। उस वक़्त बस्ती की कतिपय

झोंपड़ियाँ जल रही थीं। कृपाणजित तथा नर वानर नाटी जाति के लोगों पर हमला करके उन्हें सता रहे हैं।

उस घटना को देख नाटी जाति का सेनापति बड़ा प्रसन्न हुआ और यह खुश खबरी जयशील को सुनाने के लिए वह लौटने ही जा रहा था कि अचानक जलाश्वों पर सवार हो दो विचित्र मनुष्य आ धमके और लड़नेवाले उन लोगों पर टूट पड़े।

"ये विचित्र घोड़े कैसे हैं? ये विचित्र व्यक्ति कौन हो सकते हैं?" यों चिल्लाते नाटी जाति का सेनापति अपना आश्चर्य प्रकट कर ही रहा था कि तभी जलाश्व

पर सवार एक व्यक्ति ने एक लंबा रस्सा कृपाणजित की ओर फेंका और उसके कंठ को फंदे में कस लिया। दूसरा घुड़ सवार तलवार उठाकर नर वानर पर हमला बोल दिया।

नाटी जाति का सेनापति खुशी में आकर अट्टहास कर उठा और अपने अनुचरों को वहीं पर रह जाने का आदेश देते हुए बोला–"सुनो, शंकरसिंह के दल का सर्वनाश करने के लिए हमारे लिए यही एक अच्छा मौक़ा है। में यह समाचार हमारी रानीजी तथा उन दोनों महावीरों को सुनाकर हमारे सैनिकों को साथ लेते आऊंगा। तुम दोनों यहीं रहकर पता लगाते रहो कि क्या होनेवाला है।" यों समझाकर वह बस्ती की ओर दौड़ पड़ा।

नाटी जाति के सेनापति ने शंकरसिंह की बस्ती का वृत्तांत सुनाया। इस पर सिद्ध साधक अपना शूल उठाकर उछल पड़ा और बोला–"जय, महाकाल की!" फिर जयशील से कहा–"जयशील! अब समझ लो कि हमारा कार्य संपन्न हो गया है। इसमें जरा भी संदेह नहीं है कि उन विचित्र घोड़ों पर आये हुए लोग जलग्रह के मकरकेतु के दल के ज़रूर होंगे! मकरकेतु आँख बचाकर भाग गया है। अब इन दोनों को बन्दी बनाकर साम-दाम उपायों के द्वारा हम माया सरोवरेश्वर की जगह का पता लगा सकते हैं। इसके बाद राजा कनकाक्ष के बच्चे कांचनवर्मा तथा कांचनमाला को मिनटों में मुक्त कर सकते हैं।"

जयशील सिद्ध साधक की उत्साह भरी बातें सुनकर उसकी ओर देखते हुए मौन रह गया। सिद्ध साधक खीझकर बोला– "जयशील! लगता है कि तुम मेरी बातों पर ध्यान न दे रहे हो।"

जयशील मुस्कुराकर बोला–"तुमने मंत्र पठन की भांति जो बातें एक सांस में कह डालीं, उन्हें मैंने जरूर सुन ली है। मगर मेरे लिए आश्चर्य की बात यह लगती है

कि किन्हीं दो विचित्र आदमियों के दो विचित्र घोड़ों पर आने का समाचार सुनकर तुम इस प्रकार उत्साह में आ गये, मानो अभी राजा कनकाक्ष के बच्चे हमारे हाथ लगे हो।"

इस उत्तर ने सिद्ध साधक के उत्साह का भंग किया। उसने एक बार अपना शूल पृथ्वी पर ठोककर कहा-"जयशील! तब तो तुम्हीं बताओ, हम कब तक राजा के बच्चों का पता लगा सकते हैं? इस बीच इन जंगलों में भटकते हुए हम दोनों बूढ़े हो जायेंगे।"

"बुढ़ापा तो हमें बड़े-बड़े नगरों में निवास करते रहने पर भी छोड़नेवाला नहीं है। मैं जो सोच रहा हूँ, वह यह है कि ये दोनों विचित्र आदमी इस प्रदेश में आये ही क्यों? दूसरी बात यह है कि हम उन्हें प्राणों के साथ कैसे बन्दी बना सकेंगे?" जयशील ने शंका प्रकट की।

यह जवाब सुनने पर सिद्ध साधक का उत्साह मंद पड़ गया। अपने शूल को नीचे फेंककर बोला-"अच्छी बात है! तुम्हीं उन विचित्र आदमियों को प्राणों के साथ बन्दी बनाने की योजना बनाओ।"

जयशील ने स्वीकृति सूचक सिर हिलाया और पूछा-"तुमने अपना शूल नीचे क्यों फेंक दिया? क्या तुम आज से अपनी मंत्र-शक्ति पर ही विश्वास करना चाहते हो?"

इसके उत्तर में सिद्ध साधक धीरे से बोल उठा-"जय महाकाल की!" फिर झट से शूल को हाथ में लेकर बोला-"जयशील! मेरी मंत्र शक्ति अभी तक पूर्ण नहीं हो पाई है। उस दिन श्मशान में महाकाल के सेवक काल ने मेरे प्राण लेने का यत्न किया है न?"

"हाँ, हाँ! आज उस काल की जगह हम दोनों के प्राणों को माया सरोवरेश्वर अथवा उसके सेवकों के द्वारा ले जाने का खतरा पैदा हो गया है।" इन शब्दों के साथ जयशील ने नाटी जाति के सेनापति

की ओर मुड़कर कहा–"सेनापति, तुम्हें अपने कुछ सैनिकों को साथ ले हमारे साथ चलना होगा!"

"महानुभाव! मैं आप से ऐसे ही आदेश पाने की प्रतीक्षा में था।" इन शब्दों के साथ नाटी जाति के सेनापति ने दूर पर खड़े अपने सैनिकों को निकट आने का संकेत किया।

इसके बाद सब लोग मिलकर टीले की ओर बढ़े। थोड़ी दूर जाने पर उन्हें दायीं तरफ़ के जंगल में से नर वानर का भयंकर गर्जन सुनाई दिया। सब लोगों ने विस्मय में आकर उस दिशा की ओर देखा। नर वानर पेड़ों के नीचे रेंगते दिखाई दिया। उसके कंधों पर विचित्र पोशाक पहना एक विचित्र आदमी अचल पड़ा दिखाई दिया।

"जयशील! ऐसा लगता है कि हम जिन आदमियों को प्राणों के साथ बन्दी बनाकर माया सरोवरेश्वर के रहस्य जान लेना चाहते थे, उनमें से एक इस नरवानर के हाथों में अपने प्राण खो बैठा है। दूसरे का तो कुछ पता नहीं चल रहा है।" सिद्ध साधक ने कहा।

जयशील पल भर के लिए विस्मय में आकर बोला–"कहीं दूसरा व्यक्ति कृपाणजित के हाथों में मर तो नहीं गया है?"

"यदि ऐसा ही हुआ हो तो कृपाणजित के घमण्ड की कोई हद न होगी। एक विचित्र आदमी को उसका पालतू नरवानर उठा ले जा रहा है और दूसरे को...

सिद्ध साधक की बातें पूरी न हो पाई थीं, तभी जलाश्व पर सर्पनख तेजी के साथ उस ओर बढ़ते चिल्ला उठा–"सर्पस्वर! तुम कहाँ हो? सर्पस्वर, बोलते क्यों नहीं हो भाई?"

जयशील ने झट से हाथ उठाकर सबको सावधान करते हुए कहा–"तुम सब लोग छिप जाओ! किसी भी उपाय से सही, हमें इस आदमी को बन्दी बनाना होगा!"

(और है)

विश्वकर्मा का शाप

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया। पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति श्मशान की ओर चलने लगा, तब शव में स्थित बेताल ने कहा— "राजन, मैं नहीं जानता कि तुम किन महान आदर्शों को सफल बनाने के हेतु यों श्रम उठा रहे हो, मगर ऊँचे आदर्श कभी कभी अपार नुक़सान के कारणभूत बन जाते हैं। इसके उदाहरण स्वरूप में तुम्हें सुशर्मा नामक एक युवक की कहानी सुनाता हूं। श्रम को भुलाने के लिए सुनो।"

बेताल यों कहने लगा: प्राचीन काल में जलंधर नामक राज्य में सुशर्मा नामक एक युवक था। मूर्तियां गढ़ते समय उन्हें देखने की उसकी एक लत थी। वह प्रति दिन शिल्पियों के पास चला जाता, भूख-प्यास का ख्याल किये बिना उनकी

बेताल कथाएं

कारीगरी को देखते बैठ जाता। शिल्पियों ने उस युवक को जब कई दिन इस प्रकार उनके कार्य का निरीक्षण करते देखा, तब उसे सलाह दी—"अगर तुम्हारे मन में शिल्प कला के प्रति ऐसी अभिरुचि है तो राजा के द्वारा संचालित शिल्प विद्यालय में भर्ती क्यों नहीं हो जाते?"

इस पर सुशर्मा शिल्प विद्यालय में गया और वहाँ के कुलपति से निवेदन किया कि उसे विद्यालय में भर्ती कर ले।

कुलपति ने स्पष्ट कहा—"बेटा, तुम शिल्पियों की जाति में पैदा हुए हो तो इस विद्यालय में भर्ती होने में कोई कठिनाई नहीं है, वरना तुम्हें प्रवेश नहीं मिल सकता।"

सुशर्मा निराश हुआ और राजा की सेवा में पहुँचकर फ़रियाद की।

राजा ने सुशर्मा की लगन देख समझाया—"हाँ, हमारा तो यह पुराना नियम है, पर उन दिनों की जातियाँ विच्छिन्न हो गई हैं। इसलिए मैं तुम्हें विद्यालय में प्रवेश दिला सकता हूँ। मगर एक शर्त पर! वह यह कि तुम्हें अपनी विद्या का उपयोग जनता की भलाई के लिए करना होगा।"

"महाराज! आप की शर्त मुझे मंजूर है।" यों राजा को वचन देकर सुशर्मा शिल्प विद्यालय में भर्ती हुआ और पूर्ण रूप से शिल्प विद्या का अभ्यास किया।

चार-पांच वर्ष बीतने पर कुलपति ने सुशर्मा को बुलाकर समझाया—"तुम्हारा

प्रशिक्षण समाप्त हो गया है। अब तुम शिल्प का पेशा अपना सकते हो।"

इसके बाद सुशर्मा ने राजा की सेवा में पहुँचकर कहा–"महाराज, हमारे विद्यालय से मैंने शिल्पकला के सारे रहस्य जान लिए हैं, लेकिन मैं संतुष्ट नहीं हूँ। मेरा विचार है कि शिल्पकला के और अनेक रहस्य जानने की जरूरत है। यदि आप की आज्ञा हो तो थोड़े समय तक देशाटन करके मैं शिल्पकला के रहस्यों को जान लेना चाहता हूँ। तभी मेरे मन को संतोष प्राप्त होगा।"

राजा ने सम्मति दी। इस पर सुशर्मा नें अनेक देशों का भ्रमण करके शिल्पकला की असंख्य रीतियों का ज्ञान प्राप्त किया। मगर उसे एक जंगल के भग्न मंदिर में एक ऐसी शिल्पकला की रीति दिखाई दी जिसके बारे में उसने न कभी सुना था और न देखा ही था। फिर क्या था, सुशर्मा भूख-प्यास भूल गया। जंगली जानवरों के भय का भी ख्याल किये बिना उसी मंदिर में रहते वहाँ के शिल्प का परिशीलन करने लगा। उन्हीं दिनों में एक व्यक्ति ने वहाँ पर पहुँचकर सुशर्मा का परिचय पाने की जिज्ञासा प्रकट की।

सुशर्मा ने उस व्यक्ति से कहा–"मैं अत्यंत प्राचीन शिल्प-संप्रदाय एवं शैलियों का भी ज्ञान रखता हूँ, किंतु मैं यह समझ नहीं पा रहा हूँ कि यह शिल्प किस युग का है?"

कराया। सुशर्मा को पाताल लोक में ले जानेवाला व्यक्ति भी दानव ही था।

दानव शिल्पी मय ने सुशर्मा को शिल्प-कला के सारे रहस्य बताये। सुशर्मा ने मय को हृदयपूर्वक धन्यवाद दिया और उससे विदा लेकर भूलोक में आ पहुँचा। वह एक पर्वत प्रदेश से होकर जा ही रहा था कि उसे एक स्थान पर उत्तम शिल्प गढ़ने लायक़ शिलाएँ दिखाई दीं। सुशर्मा वहीं पर रुक गया और उन शिलाओं पर मय की शिल्प-शैलियों को अंकित करने लगा।

"यह शिल्प कृत युग का है। इसके रहस्य जाननेवाले आज इस संसार में कोई भी नहीं हैं।" आगंतुक ने समझाया।

सुशर्मा ने अपनी गहरी चिंता व्यक्त करते हुए कहा–"तब तो यह कैसा अन्याय है?"

"क्या तुम मेरे साथ चल सकोगे? मैं तुम्हें ये सारे रहस्य जाननेवाले महाशिल्पी का परिचय कराऊँगा।" आगंतुक ने कहा।

दूसरे ही क्षण सुशर्मा का चेहरा खिल उठा। इसके बाद सुशर्मा उस आगंतुक के साथ पाताल लोक में गया और दानव शिल्पी मय के साथ उसका परिचय

उस वक़्त गगन मार्ग से देवताओं का शिल्पी विश्वकर्म जा रहा था। कृत युग के शिल्पों को गढ़नेवाले कलियुग के मानव को देख वह विस्मय में आ गया, पृथ्वी पर उतर आकर बोला–"महाशय, तुम इस निर्जन प्रदेश में ये शिल्प क्यों गढ़ रहे हो? इससे जनता का क्या उपयोग हो सकता है?"

सुशर्मा ने अपना सारा वृत्तांत सुनाकर कहा–"महाशय, मैं अभी तक पूर्ण शिल्पी नहीं बन पाया। मेरे मन में और अधिक शिल्प का ज्ञान प्राप्त करने की उत्कट अभिलाषा है। मैं अपना सारा जीवन शिल्प कला के रहस्यों को जानने में लगा देना चाहता हूँ। पर यह बताइये, आप कौन हैं?"

"मैं देवताओं का शिल्पी विश्वकर्म हूं।" विश्वकर्म ने अपना परिचय दिया।

सुशर्मा विश्वकर्म के चरणों पर साष्टांग दण्डवत करके बोला-"मैंने अपने पूर्व जन्म के पुण्य के कारण कृत युग के दानव शिल्पों के रहस्य जान लिये हैं; आप कृपया मुझे अपने शिष्य के रूप में ग्रहण कीजिए, मुझे देवता शिल्प के रहस्यों का परिचय देकर धन्य कीजिए।"

"अरे दुष्ट! पापी! तुमने अब तक शिल्प के जो रहस्य जान लिये उन सबको भूल जाओ।" यों शाप देकर विश्वकर्म अंतर्धान हो गया।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा-"राजन, विश्वकर्म सुशर्मा पर क्यों क्रोधित हुए? सुशर्मा को उन्होंने क्यों शाप दिया? क्या इसलिए कि उसने दानव-शिल्प के रहस्य जान लिये हैं? या देवता-शिल्प के रहस्य जानने की इच्छा प्रकट की? इन संदेहों का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सिर टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया: "विश्वकर्म के क्रोध और शाप का कारण कुछ और है। सुशर्मा शिल्पी के रूप में अपने पथ से विचलित होनेवाला दुष्ट है। राजा को वचन देकर मुकरनेवाला पापी है। राजा ने उसे देशाटन पर जाने की इसलिए अनुमति दी थी कि वह शिल्प की नयी रीतियों का ज्ञान प्राप्त करके जनता के कल्याण में उसका उपयोग करेगा। सुशर्मा ने विश्वकर्म से जो बातें कहीं, उनसे यह स्पष्ट विदित है कि वह अपना सारा जीवन शिल्प के रहस्य जानन में ही लगा देना चाहता है। यह तो स्वार्थ की भावना है। विश्वकर्म को जब यह स्पष्ट हो गया कि सुशर्मा के ज्ञान के द्वारा जनता की कोई भलाई न होगी, तभी विश्वकर्म ने उसे शाप दिया। विश्वकर्म का सुशर्मा को शाप देना सर्वथा उचित है।"

राजा के इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

पेड़ का फ़ैसला

दीनानाथ अपनी मृत्यु के साथ पत्नी, दो पुत्रों तथा थोड़ी-सी संपत्ति छोड़ गया। बड़ा पुत्र काशीनाथ अट्ठाईस वर्ष का था जो अपने ही गाँव में ज़मीन्दार के यहाँ कर वसूली की नौकरी करता था, दूसरा पुत्र निशिनाथ छोटा था जो पाठशाला में पढ़ता था।

काशीनाथ दुष्ट स्वभाव का था। इसलिए अपने पिता की मृत्यु के बाद जायदाद के बंटवारे में अपने छोटे भाई के प्रति अन्याय करना चाहा। उसने गाँव के बुज़ुर्गों को बुलवा कर अपनी जायदाद के दो समान भाग करवाये। तब कहा—"चूंकि मेरी माता छोटे पुत्र को अधिक चाहती है और उसे खाना बना कर खिलानेवालों की भी ज़रूरत है, इसलिए मेरी माता काशीनाथ के साथ ही रहे, मैं उनके वास्ते थोड़ी-बहुत संपत्ति दूंगा।"

उनके मकान के पिछवाड़े में सेब का एक पेड़ था। उसके फल अच्छे क़िस्म के थे, उनका रंग, गंध और स्वाद भी असाधारण थे। वह पेड़ दोनों भाइयों के हिस्सों के बीच था। वह अपनी आमदनी से अपनी पत्नी व बच्चों का पेट पाल सकता था, मगर निशिनाथ के कोई आमदनी न थी। इसलिए गाँव के बुज़ुर्गों ने बताया कि सेब का पेड़ निशिनाथ को दिया जाय। पर काशीनाथ ने न माना। इस पर बुज़ुर्गों ने समझाया कि कम से कम पेड़ में लगनेवाले फलों में से आधा हिस्सा निशिनाथ को दे।

इस पर काशीनाथ वहाँ से उठ कर जाते हुए बोला—"फल बांट लेने में क्या तुक है? पेड़ को काटकर लकड़ियों को आधा-आधा बांट ले तो झगड़ा ही खतम हो जाएगा।"

ए. सी. सरकार, जादूगर

एक बुजुर्ग ने क्रोध में आकर कहा– "यह तो बड़ा ही हठी मालूम होता है, इसे बिरादरी से बहिस्कार करे तो इसका घमण्ड जाता रहेगा।"

"महानुभाव! ऐसा काम न कीजिएगा! मुझे भले ही सेब न मिले, 'भगवान के प्रति मेरे मन में दृढ़ विश्वास है। यदि में कठिनाइयों में फँस जाऊँगा, तो भगवान ही मेरी रक्षा करेंगे।" निशिनाथ ने कहा।

"ऐसा ही हो, भाई! हम तो तुम्हारी रक्षा नहीं कर पा रहे हैं।" बुजुर्गों ने कहा।

कई दिन बीत गये। अपने हिस्से की आमदनी से निशिनाथ जैसे-तैसे अपने दिन काटने लगा। उसने मन लगाकर अध्ययन किया, पाठशाला की पढ़ाई समाप्त कर ऊँची शिक्षा पाने के लिए शहर में गया। प्रति दिन उसे अपने गाँव से शहर तक तीन मील पैदल चलना पड़ता था। साइकिल मिल जाती तो बड़ी सहूलियत होती। मगर साइकिल खरीदने के लिए उसके हाथ में पैसे न थे।

सेब का मौसम आया। घर के पिछवाड़े के सेब के पेड़ में खूब फल लगे। उनमें से आधा हिस्सा भी मिल जाय तो निशिनाथ उन फलों को बेचकर साइकिल खरीद सकता था। उसने मन में कहा– "भगवन! यह जिम्मा तो आप पर ही है।"

एक सप्ताह बाद काशीनाथ अचानक बीमार पड़ा। वैद्यों ने इलाज करना शुरू किया, पर वे ठीक से रोग का निदान न कर पाये। वह ज़िंदगी और मौत के बीच झूलने लगा। इसे देख निशिनाथ ने भगवान से प्रार्थना की कि उसका भाई जल्द ही चंगा हो जाए! शायद उसकी प्रार्थना का परिणाम हो, काशीनाथ स्वस्थ होने लगा। लेकिन कमजोरी बनी रही। मानसिक दृष्टि से भी वह दुर्बल हो गया था।

गाँव के बुजुर्गों ने काशीनाथ के घर पहुँचकर समझाया–"देखो काशीनाथ! तुम मरते-मरते बच गये। भगवान ने तुम्हारी रक्षा की। तुम सेब का पेड़ अपने भाई को दे दो! तुम्हारी माँ भी वे फल खायेंगी। वे दोनों कोई पराये थोड़े ही हैं?"

"मुझे जिस भगवान ने बचाया, वे निशिनाथ को सेब का पेड़ क्यों नहीं दिलाते? बीच में देनेवाला मैं कौन होता हूँ?" काशीनाथ ने स्पष्ट शब्दों में कहा।

बुजुर्गों के बीच निशिनाथ का सहपाठी हरकुमार भी बैठा हुआ था। उसने झट से काशीनाथ से पूछा–"तब तो क्या तुम भगवान के निर्णय को स्वीकार करोगे न?"

"यदि भगवान यह निर्णय करे कि सेब का पेड़ किसे प्राप्त हो, मैं जरूर उस निर्णय को स्वीकार करूँगा।" काशीनाथ ने वचन दिया।

"तब तो तुम अपने पुत्र रामनाथ के सर पर हाथ रखकर शपथ करो।" हरकुमार ने पूछा।

"हाँ, मैं शपथ खाकर कहता हूँ।" काशीनाथ ने अपने बेटे के सिर पर हाथ रखकर कहा। इसके बाद सब लोग अपने अपने घर चले गये।

हरकुमार ने निशिनाथ से मिलकर कहा–"अगर तुम्हारे भाई अपनी शपथ का पालन करेंगे तो समझ लो, सेब तुम्हारा ही होगा।"

"भगवान का अनुग्रह प्राप्त करने के लिए मैं थोड़े ही बड़ा भक्त हूँ?" निशिनाथ ने शंका प्रकट की।

"भगवान खुद कुछ नहीं करते! मगर उन्होंने मनुष्यों को जो बुद्धि दी है, उन्हीं के द्वारा सब कुछ करा देंगे! मैं तुम्हारा यह समाचार हमारे साथी नकुल से कहूँगा। वह इंद्रजाल में प्रवेश रखता है। तुम्हारी समस्या जरूर हल करेगा।" हरकुमार ने समझाया।

इसके दो दिन बाद गाँव के बुज़ुर्ग काशीनाथ के घर सेब के नीचे इकट्ठे हुए।

हरकुमार ने खड़े होकर कहा—"अगर भगवान का यह विचार हो कि यह पेड़ निशिनाथ को प्राप्त हो, तो इस पेड़ में या फलों में इसके प्रमाण मिलने चाहिए। मैं पेड़ पर चढ़कर दो-तीन फल तोड़ लाता हूँ। देखेंगे, कहीं इसके प्रमाण मिल जाये!"

इसके बाद हरकुमार ने पेड़ को प्रणाम किया, पेड़ पर चढ़कर दो-तीन डालों से तीन-चार फल तोड़ डाला। उन्हें अपनी जेब में डालकर उतर आया। उसने जेब में से फल निकालकर सब को दिखाया, पर उनमें कोई प्रमाण न था।

"शायद फल के भीतर कोई प्रमाण मिल जाय, देखेंगे।" ये शब्द कहते हरकुमार ने काशीनाथ के हाथ एक सेब और चाकू दिलाया और कहा—"इसका छिलका निकालकर देख लो, कहीं कोई प्रमाण मिल जाय!"

काशीनाथ ने सेब का छिलका निकाला तो देखता क्या है, भीतर का फल दो टुकड़ों में बंटा हुआ है!

इसे देख सब लोग एक स्वर में चिल्ला उठे—"ओह, यह तो भगवान की महिमा है! अद्भुत है!"

इस पर गाँव के बुज़ुर्गों में से सब से वृद्ध व्यक्ति ने काशीनाथ से कहा—"बेटा, यह तो भगवान का निर्णय है!

अब भी सही सेब का यह पेड़ तुम अपने छोटे भाई को दोगे या नहीं?"

"आप लोगों की जो मर्जी! अब मैं कैसे इनकार कर सकता हूँ? मैंने अपने बेटे की शपथ जो ली है! यह पेड़ तो निशिनाथ का ही है!" काशीनाथ ने कहा।

निशिनाथ ने उस पेड़ के फल बेचकर साइकिल खरीद ली।

एक दिन उसी साइकिल पर हरकुमार को बिठाकर काशीनाथ शहर जा रहा था, तब उसने पूछा–"हरकुमार! मेरी समझ में नहीं आ रहा है कि सेब के भीतर दो टुकड़े कैसे बन गये थे। क्या सचमुच भगवान ने मुझ पर अनुग्रह किया था?"

"दोस्त! तुम वैसे कोई बड़े पुण्यात्मा नहीं हो। यह करतूत हमारे मित्र नकुल की है!" हरकुमार ने रहस्य खोल दिया।

"यह कैसे?" निशिनाथ ने पूछा।

"मैं उसके सुझाव पर सब की आँख बचाकर रात के वक़्त तुम्हारे पेड़ पर चढ़ गया और दो-चार सेब तोड़ ले गया था। एक सूई के भीतर धागा चढ़ाकर सूई को फल के छिलके के भीतर आड़े घुसेड़कर उसके छिलके के नीचे से खिसकाते फल के दूसरे छोर तक ले गया। इसके बाद उस सूई को दूसरी तरफ़ छिलके के नीचे से उस जगह ले गया, जहाँ पर पहले उसे चुभोया था। याने फल के छिलके के भीतर धागा फल को लपेटकर आया है, तब धागे के दोनों छोरों को पकड़कर खींच दिया। धागा फल के भीतरी भाग को दो हिस्सों में फाड़कर बाहर आ गया। फिर क्या था, तब फ़ल को कपड़े से रगड़कर चमका दिया जिससे सुई के छेद भर गये। याने गायब हो गये। इस प्रकार पहले से ही तैयार किये गये सेब लेकर पेड़ पर चढ़ गया, मगर जेब से निकालते समय पेड़ से तोड़े हुए फल के बदले पहले से ही तैयार किये गये फल बाहर निकाले।" हरकुमार ने समझाया।
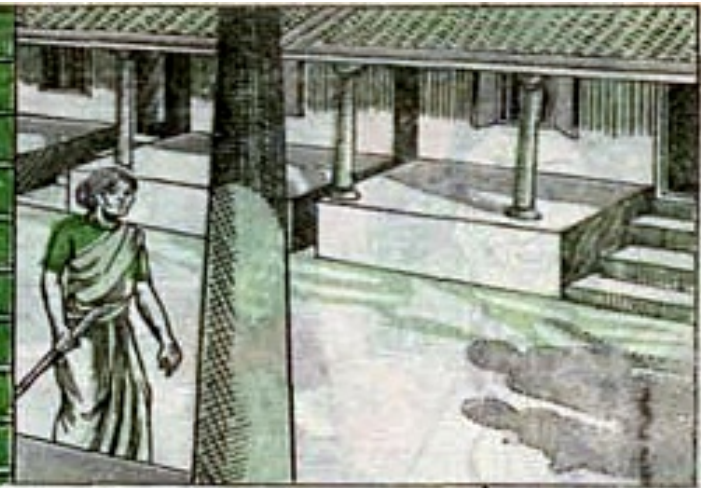
घर का भेद

आनंद एक बनिये के यहाँ गुमाश्ता था। कामाक्षी नामक एक युवती से उसने शादी की और घर ले आया। उसी दिन वह अपने काम पर जाते हुए कामाक्षी से बोला—"सुनो, मैं दूकान जा रहा हूँ, इस गाँव में एक कानी बूढ़ी है, वह बड़ी मीठी-मीठी बात करती है, उसे घर के अन्दर घुसने न देना, समझी!"

कामाक्षी घर का सारा काम-काज पूरा करके आंगन में आ गई। उसने खिड़की में से बाहर देखा, एक कानी बूढ़ी घर के सामने चक्कर काट रही थी। कामाक्षी ने झट से खिड़की बंद कर दी।

आनंद शाम को घर लौटा। कामाक्षी ने बूढ़ी को घर के भीतर आने न दिया था, यह जानकर वह बड़ा खुश हुआ, फिर से चेतावनी देते हुए बोला—"सुनो, भूल से भी सही, उस बूढ़ी को घर के भीतर क़दम रखने न देना।"

प्रति दिन वह बूढ़ी आनंद के घर के सामने चक्कर लगाया करती थी। कामाक्षी उसे देखकर भी ऐसा अभिनय करती थी, मानो उसने बूढ़ी को देखा तक नहीं। लेकिन एक दिन कामाक्षी के मन में शंका हुई। उस बूढ़ी के प्रति उसका पति ईर्ष्या क्यों करते हैं?

इस शंका के पैदा होते ही कामाक्षी से रहा न गया। उसने किवाड़ खोलकर बूढ़ी को घर के अन्दर बुलाया। बूढ़ी बड़ी खुशी से अन्दर आ बैठी, कामाक्षी से बड़ी देर तक प्यार से बात करती रही।

बूढ़ी का चेहरा विकृत ज़रूर था, पर उसकी बातों में कोई आकर्षण था। बूढ़ी बोली—"बेटी, तुम तो बड़ी भली लगती हो! पर तुम्हारी हालत पर मुझे

जीवन शर्मा

बड़ी दया आती है। तुम्हारे पति में सब प्रकार की बुरी लतें हैं। वह रोज गाँव के छोर पर स्थित झोंपड़ी में जुआ खेलकर तब देरी से घर लौटता है। अगर तुम्हें मेरी बातों पर यक़ीन न हो तो आज शाम को ख़ुद जाकर देख लो।" यों समझाकर बूढ़ी चली गई।

अपने पति को जुआरी जानकर कामाक्षी का दिल दहल उठा। उसने सोचा कि अपने पति का भेद खुल जाएगा, यों सोचकर उसके पति ने बूढ़ी को पास पटकने से मना कर दिया है।

उस दिन शाम को कामाक्षी ने अपने घर के सारे किवाड़ बंद किये, दर्वाजे पर ताला लगाया। गाँव के छोर पर स्थित झोंपड़ी के निकट गई और झांककर भीतर देखा। भीतर कुछ लोग जुआ खेल रहे थे, लेकिन उनमें आनंद न था।

"यह बूढ़ी धूर्त मालूम होती है। पति-पत्नी के बीच झगड़े पैदा करनेवाली है।" यों सोचते कामाक्षी घर लौट आई। पर देखती क्या है, पिछवाड़े में रखे बर्तन-बाल्टी वगैरह गायब थे। कोई पिछवाड़े की दीवार फांदकर चुरा ले गया होगा। मगर वह अपने पति को क्या जवाब दे, यह समझ में न आया।

अंधेरे के फैलते-फैलते आनंद घर लौटा। कामाक्षी ने रोते हुए सारा क़िस्सा सुनाया—"मैंने तुम्हारी बातों पर यक़ीन नहीं किया, बूढ़ी को घर के अन्दर घुसने दिया। इसका फल मुझे मिल गया है।"

"यह बूढ़ी की करतूत होगी! ऐसे काम करने के लिए उसका एक पोता है। लेकिन उसे कोई चोरी करते पकड़ नहीं पा रहे हैं।" आनंद ने समझाया।

कामाक्षी के मन में ऐसा क्रोध भड़क उठा कि उसी वक़्त जाकर बूढ़ी का गला घोंट दे। लेकिन उसने मन ही मन निश्चय कर लिया कि उसे सबक़ सिखाने के लिए कोई उपाय करना चाहिए। उसने अपनी युक्ति पति को बताई।

उसी वक़्त कामाक्षी ने एक बक्सा उठाया, घर पर ताला लगाकर बूढ़ी के घर चल पड़ी। बूढ़ी के घर में बूढ़ी के साथ उसका पोता भी था। कामाक्षी को देखते ही बूढ़ी के चेहरे के रंग बदलने लगे।

पर कामाक्षी अपने आंचल से मुंह ढककर रोने का अभिनय करते बोली–"नानीजी, तुमने मेरे पति का भेद खोलकर मेरे प्रति बड़ा उपकार किया है। मैं अब एक पल भी उस घर की गृहस्थी संभाल नहीं सकती।"

बूढ़ी यह सोचकर खुश हुई कि उसने यूं ही झूठ कह दिया तो सो सच निकला।

कामाक्षी ने कहा–"बूढ़ी नानी, सुना है, मेरा पति जुआरा ही नहीं बल्कि शराबी भी है। आधी रात तक वह जुआ खेलता है। इसलिए मैं घर पर ताला लगाकर यहाँ चली आई हूँ। सवेरे मैं किराये की गाड़ी लेकर अपने मायके चली जाऊँगी। तुम मेरे घर जाओ, मेर पति के लौटते ही यह चाभी उसके हाथ दे दो।"

बूढ़ी ने कामाक्षी की बातों पर विश्वास किया। उसने चाभी हाथ में लेते हुए कहा–"अरी, मैं तो तुम्हारी यह भी मदद नहीं कर सकती? तुम चिंता न करो।"

"शराब पीकर लौटने पर शायद मेरा पति तुम्हें पीटे, क्या पता? तुम मदद के लिए अपने पोते को भी साथ लेते जाओ।" कामाक्षी ने समझाया।
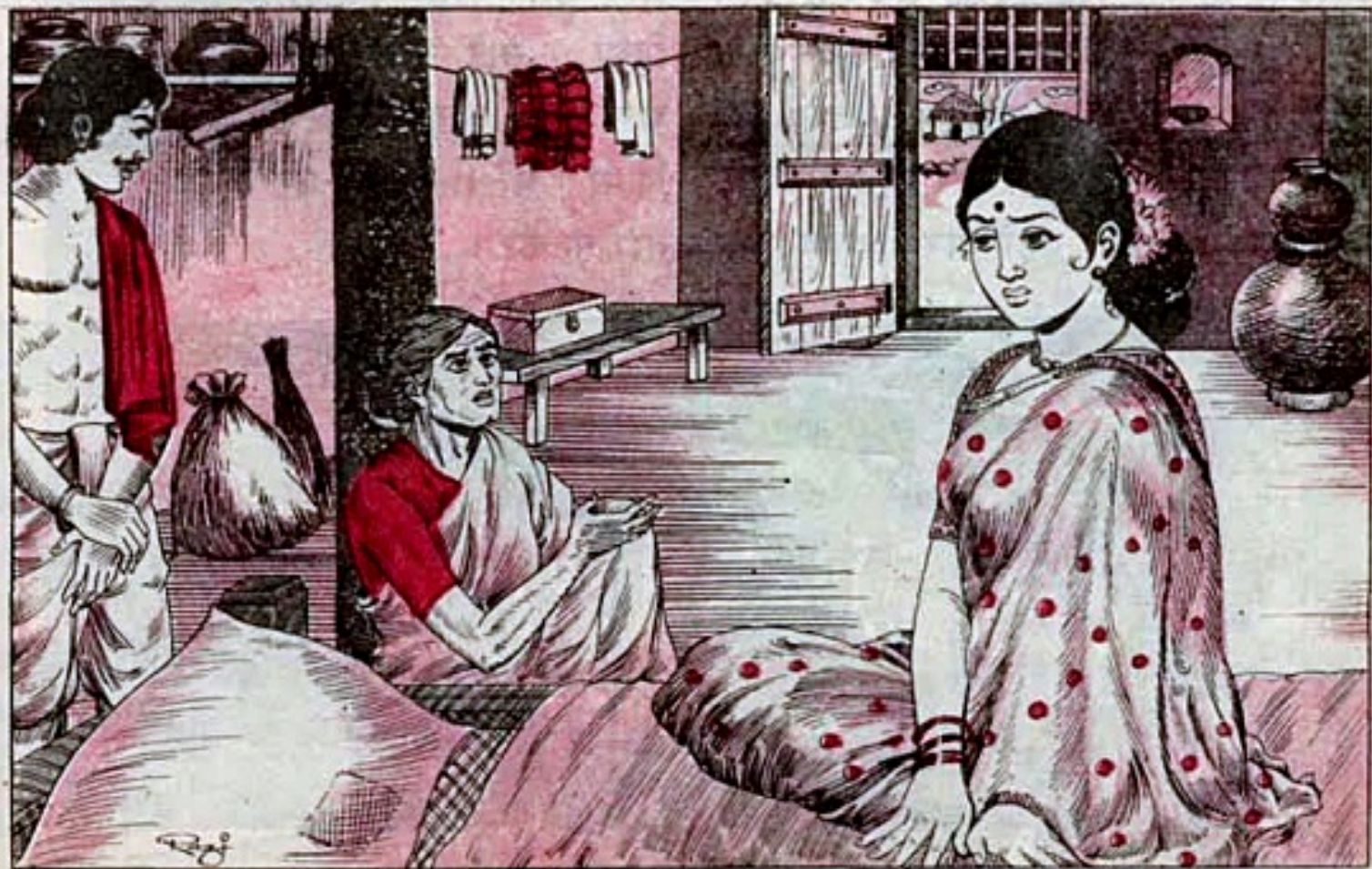
यह विचार बूढ़ी के मन में पहले ही आ गया था, मगर कामाक्षी के मुंह से यह बात सुनकर वह बहुत ही प्रसन्न हो उठी और अपने पोते को साथ ले उसी वक़्त कामाक्षी के घर चल पड़ी। उसने सोचा कि कामाक्षी का पति आधी रात तक घर न लौटेगा। इसलिए फिर क्या, उसकी पाँचों उंगलियाँ घी में हैं। इस बीच वह बड़े ही इतमीनान से घर लूट सकती है।

कामाक्षी के घर पहुँचकर उस अंधेरे में दर्वाजा खोल दोनों भीतर पहुँचे। सारी चीज़ें हड़पकर गठरी बांध ली। तब दोनों ने पिछवाड़े की राह से भागने का निश्चय किया। गठरियाँ उठाये पिछवाड़े के किवाड़ खोल ज्यों ही बाहर निकलने को हुए त्यों ही सामने कई आदमियों को लाठियों से लैस देख जड़वत खड़े रह गये।

पिछवाड़े में दस आदमी लालटेन और लाठी लेकर तैयार खड़े थे। इसे देख बूढ़ी और उसका पोता घर के प्रवेश द्वार की ओर भागे। वहाँ पर आनंद दस आदमियों के साथ तैयार खड़ा था। "इतने सारे दिन बाद तुम दोनों चोरी करते रंगे हाथ पकड़े गये हो! तुम्हारे पापों का घड़ा भर गया है। गठरियाँ नीचे रख दो।" आनंद ऊँचे स्वर में गरज उठा।

मार खाने के डर से दोनों सहम गये और गठरियाँ नीचे रखकर हाथ उठाये। सब लोग बूढ़ी के घर पहुँचे। इस बीच कामाक्षी ने घर की सारी सामग्री लाकर आंगन में रख दी थी। वह सारा सामान चोरी का माल था। वहाँ पर जो लोग आये थे, उनके घरों से चुराई गई चीज़ें भी थीं। सबने अपनी अपनी चीज़ें पहचानकर ले लीं।

कामाक्षी ने अपने बर्तन व बाल्टी ले ली। इसके बाद गाँववालों ने बूढ़ी और उसके पोते को पुलिस के हवाले कर दिया। सारे गाँव के लोग जो काम न कर पाये, कामाक्षी अकेली ने यह काम किया था। इस पर सबने उसकी तारीफ़ की।
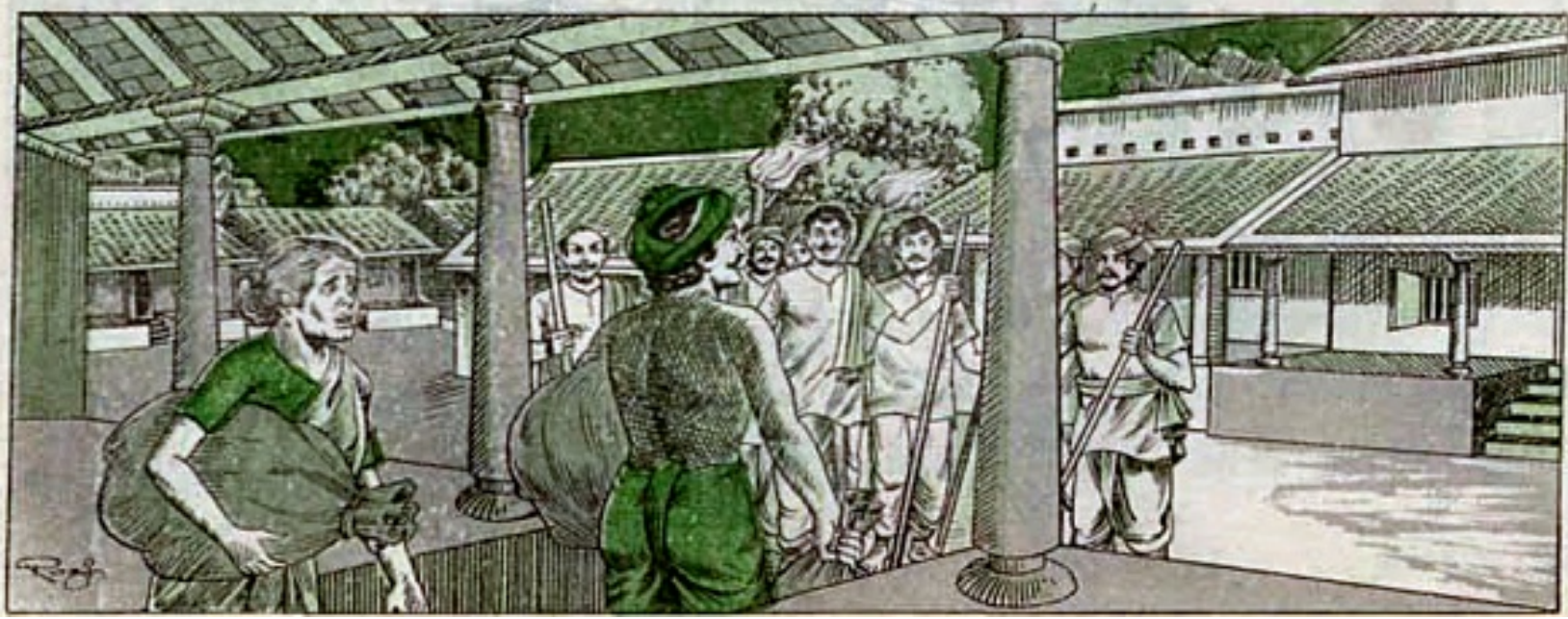
वर की परीक्षा

अवंती की राजकुमारी अपूर्व सुंदरी थी। उसके योग्य पति का निर्णय करने के लिए एक परीक्षा रखी गई। इसके वास्ते तीन देशों के राजकुमारों के पास निमंत्रण भेजे गये।

अवंती के राजा ने तीनों राजकुमारों को कुत्तों की शाला के पास ले जाकर समझाया—"ये सारे कुत्ते वर-परीक्षा में पराजित राजकुमार हैं। तुम लोगों की परीक्षा यह है कि पूर्वी दिशा में स्थित पहाड़ी गुफा के भीतर हो आना है।"

ये शब्द सुनते ही एक राजकुमार घबराकर अपने राज्य की ओर चल पड़ा। बाक़ी दोनों पहाड़ी गुफा की ओर चल पड़े। जब वे गुफा के निकट पहुँचने को हुए, तब गुफा के भीतर से एक कुत्ते के भूँकने की आवाज़ सुनाई दी। इस पर एक और राजकुमार अपने घोड़े पर सवार हो लौट गया।

अब एक राजकुमार बचा था। उसने साहसपूर्वक गुफा के भीतर प्रवेश किया। वहाँ पर राजकुमारी ने उसका स्वागत किया और उसके कंठ में वरमाला पहना दी।
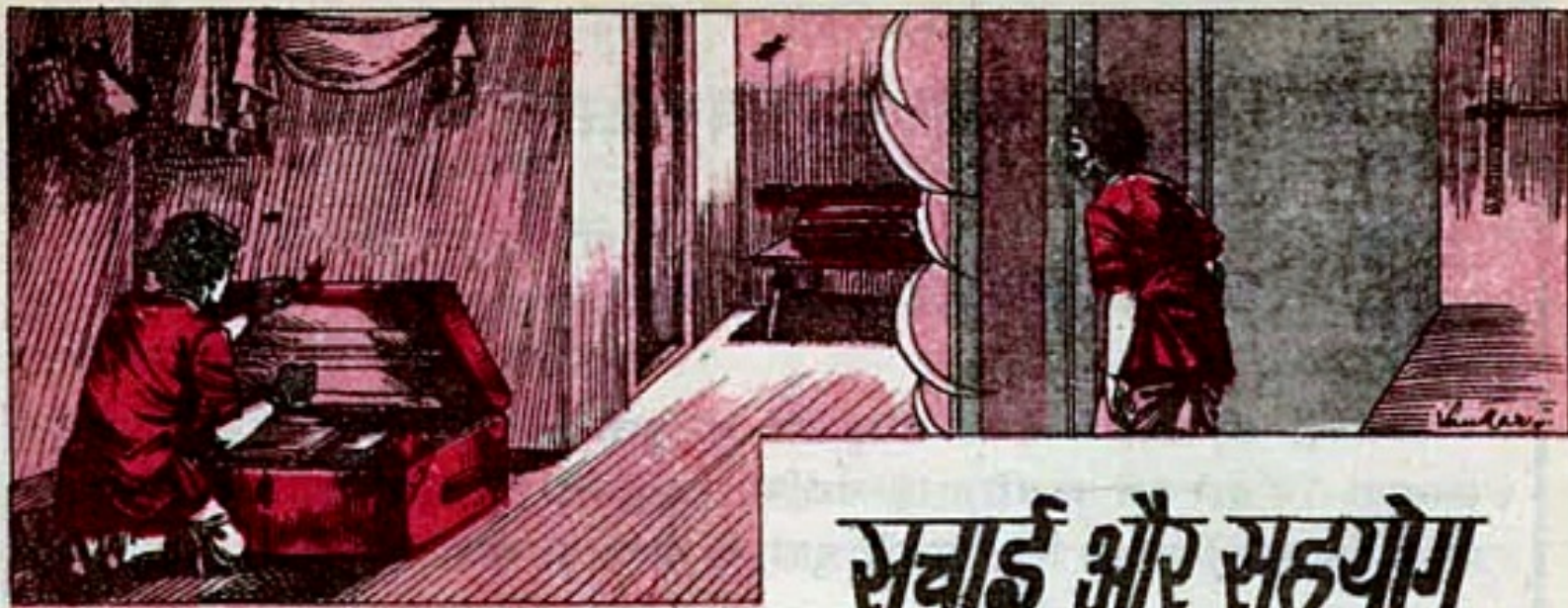
सचाई और सहयोग

एक जमीन्दार के यहाँ गिरिधर नामक एक माली, माणिक नामक एक नौकर थे। दोनों क़रीब क़रीब एक साथ आकर नौकरी पर लग गये थे, पर उनके बीच जरा भी पटती न थी।

एक दिन जमीन्दार माणिक को साथ ले बगीचे में टहलने निकला। उस वक़्त गिरिधर पेड़ों को पानी सींच रहा था। जमीन्दार बगीचे में थोड़ी देर टहलकर चला गया। जहाँ पर वे दोनों खड़े थे, गिरिधर को चमकनेवाली कोई चीज दिखाई दी। गिरिधर ने निकट जाकर देखा, वह हीरे की अंगूठी थी।

गिरिधर ने अपने मन में सोचा–"भूल से यह अंगूठी खिसककर गिर गई होगी। मेरे हाथ लगी, सो अच्छा हुआ। मगर माणिक के हाथ पड़ जाती तो न मालूम क्या होता?"

यों सोचते उसके दिमाग में कोई उपाय सूझा। उसने इधर-उधर ताककर झट से अंगूठी को धोती की पेंट में कस लिया।

उस दिन रात को वह माणिक के कमरे की ओर चल पड़ा।

गिरिधर के अनुकूल माणिक के कमरे के किवाड़ खुले थे। गिरिधर ने झांककर भीतर देखा। माणिक अभी तक सोया न था, वह अपने बकसे में कोई चीज़ ढूंढ रहा था, आखिर माणिक ने बकसे से कोई चीज़ निकाली, मुट्ठी में बंद कर किवाड़ की ओर बढ़ने को हुआ।

गिरिधर आड़ में छुप गया, माणिक के बाहर जाने पर बिल्ली की भांति वह कमरे में घुस गया। तब अंगूठी माणिक के बकसे के अन्दर रखकर बाहर चला गया।

तब जाकर गिरिधर का दिमाग तेजी के साथ हरकत करने लगा। आखिर इस

काशीनाथ

रात के वक़्त माणिक कहाँ चला गया है? उसकी मुट्ठी में क्या चीज़ थी? फिर क्या था, गिरिधर माणिक की दिशा में तेजी के साथ चल पड़ा।

माणिक ने बगीचे में जाकर नहर के किनारे के पेड़ के खोखले में कोई चीज़ छिपा दी। अकसर गिरिधर नहाते वक़्त अपने कपड़े उसी खोखले में रखा करता था। इसलिए गिरिधर के मन में यह कुतूहल पैदा हुआ कि देखें कि माणिक ने उस खोखले में कौन चीज़ छिपा रखी है! माणिक के चले जाने पर गिरिधर पेड़ की तरफ़ बढ़ा। पर उसी वक़्त उसके सर पर भारी मार पड़ी, वह बेहोश हो गया।

होश में आने पर गिरिधर ने देखा कि वह अपने कमरे में पड़ा हुआ है। उसने सोचा कि माणिक ने ही उसके आगमन को भांपकर पीछे से आकर उस पर लाठी चलाया होगा, इसलिए सवेरे जाकर उससे बदला लेना होगा।

दूसरे दिन सवेरे जमीन्दार ने अपने दोनों नौकरों को बुलवाकर धमकाया–"मेरे हाथ में बांधनेवाली सोने की जंज़ीर किसी ने हड़प ली है। उसे चुराने का मौक़ा तुम दोनों को ही मिल सकता है। अगर सच सच न बताओगे कि किसने हड़प ली है, दोनों के चमड़े उतार दूंगा।"

ये बातें सुनकर गिरिधर चौंक पड़ा। अपनी अंगूठी खोकर जमीन्दार सोने की जंज़ीर खोने की बात कहता है। यह कैसी बात है? मगर माणिक ने बिना झिझक के स्पष्ट शब्दों में कहा–"हुज़ूर! यह तो गिरिधर की ही करतूत है। रात को बगीचे में वह कोई चीज़ छुपा रहा था, तब मैंने अपनी आँखों से खुद देखा है। चलिए, मैं दिखा देता हूँ।" यों कहते वह जमीन्दार को साथ लेकर पेड़ के पास चला गया।

पेड़ के खोखले में हाथ डालकर माणिक ने टटोलकर देखा, घबराते हुए मन ही मन बोला–"अरे, मैंने तो यहीं पर छिपा रखा था, क्या हो गया?"

माणिक की चाल गिरिधर की समझ में आ गई। उस पर चोरी का इलजाम लगाने के लिए ही माणिक ने जमीन्दार की जंजीर हड़प कर पेड़ के खोखले में छिपाया था। मगर कोई बदमाश पीछे से आकर उसे पीटकर जंजीर ले गया है।

गिरिधर के मन में माणिक के प्रति बड़ा क्रोध आया। उसने जमीन्दार से कहा–"मैं जानता हूँ कि जंजीर चुरानेवाला चोर कौन है? वास्तव में आप अपनी अंगूठी की बात भूल गये मालूम होता है। दोनों चीज़ों को माणिक ने ही हड़प लिया है। मेरे साथ चलिए।" यों कहते गिरिधर जमीन्दार को माणिक के कमरे में ले गया। बकसा खोलकर देखा, लेकिन उसमें अंगूठी न थी।" घबराकर गिरिधर बड़बड़ाने लगा–"मैंने तो इसी में डाल दी थी, क्या हो गया है?"

इसे देख जमीन्दार ने हंसते हुए जेब में हाथ डाला। दोनों चीज़ों को दिखाते हुए बोला–"लो देखो, यह सोने की जंजीर है और यह है हीरे की अंगूठी।"

दोनों नौकरों के चेहरे पीले पड़ गये। इस पर जमीन्दार ने कहा–"तुम दोनों की परीक्षा लेने के लिए ही मैंने यह नाटक रचा है। मैंने अपनी अंगूठी और जंजीर इस तरह गिराई थी जिससे तुम लोगों की नज़र में आ जाये। मैं यह जानना चाहता था कि तुम लोग उन्हें मुझे लौटाते हो या नहीं? तुम दोनों ने उन्हें हड़प तो नहीं लीं पर उनकी मदद से एक दूसरे को चोर साबित कर मेरे विश्वास का संपादन करना चाहा। तुम में सचाई हो सकती है, पर तुम में परस्पर सहयोग की भावना नहीं है। इस कारण तुम लोगों के द्वारा मुझे अनेक उलझनों में फँसना पड़ेगा, इसलिए अब तुम दोनों अपने अपने घर जा सकते हो।"

जमीन्दार की बातें सुन दोनों के सर झुक गये और वे शर्मिंदा हो वहाँ से चले गये।

गिलहरी की धारियाँ

एक गाँव में विद्यानाथ नामक एक महा पंडित गुरुकुल चलाया करता था। गुरुकुल का यश चारों तरफ़ फैल गया था, इसलिए दूर प्रदेशों से विद्यार्थी उस गुरुकुल में पढ़ने आया करते थे।

विद्यानाथ का पुत्र बृहस्पति भी अपने पिता के बराबर का पंडित निकला। विद्यानाथ ने सोचा कि शीघ्र ही अपने पुत्र को गुरुकुल का भार सौंप देना है। उसने बृहस्पति से कहा—"बेटा, तुम विद्या में पारंगत हो गये हो, अब दुनियःदारी का ज्ञान तुम्हें प्राप्त करना है। समाज की रीति, जनता के जीने की पद्धति जाने बिना तुम अपने ज्ञान का प्रसार विद्यार्थियों के उपयोगार्थ न कर सकोगे। इसलिए तुम देशाटन करके लौट आओ।"

बृहस्पति गुरुकुल से तत्काल निकल पड़ा। गाँवों का भ्रमण करते जनता के वास्तविक जीवन का परिशीलन करने लगा, जिससे पुस्तकों के द्वारा न प्राप्त होनेवाली कई बातें वह जानने लगा। कहीं कहीं उसने आश्चर्यजनक घटनाएँ भी देखीं।

एक गाँव में हाथी जैसे बलवान मल्ल योद्धा एक दुर्बल व्यक्ति की चरण-पूजा करते चिल्ला रहा था—"महाबली की जय!" बृहस्पति ने इस आश्चर्यपूर्ण घटना का कारण पूछा तो यों बताया गया:

एक जमाने में उस गाँव में महाबली नामक एक व्यक्ति था। उसने कई बार अनेक विपदाओं से उस गाँव की रक्षा की थी। चारों तरफ़ के जंगलों से आकर खूंख्वार जानवर गाँव पर हमला कर देते तो वह अकेले ही उनका सामना कर उन्हें मार देता था। एक बार दुर्मुख नामक एक राक्षस ने उस गाँव को ही नहीं, बल्कि

आसपास के सभी गाँववालों को सताना शुरू किया, तब महाबली ने महाकाली की पूजा करके दुर्मुख के साथ भयंकर युद्ध किया और अंत में उसे मार डाला। उस समय से वहाँ के गाँवों के लोगों में महाबली के प्रति अपार श्रद्धा पैदा हो गई। खासकर बलवान व्यक्तियों के लिए वह आराध्य हो गया। उस दिन से वे लोग दुर्मुख की मृत्यु के दिन को पर्व दिन मानकर महाबली की चरण-पूजा करते आ रहे हैं। कालांतर मे महाबली का देहांत हो गया। सैकड़ों साल बीत गये। फिर भी उस दिन महाबली के वंश के लोगों की चरण-पूजा उसी प्रकार होती आ रही है।

बृहस्पति ने अनेक संदर्भों में देखा, किसी वंश के पूर्वजों के बड़प्पन को देख आनेवाली पीढ़ियों के लोगों की पूजा की जा रही है। मगर इसके विरुद्ध घटना भी उसने एक गाँव में देखी।

बृहस्पति एक बार एक गाँव के मुखिये वितंड के घर पर ठहर गया। विद्यानाथ का यश सर्वत्र फैल गया था, इस कारण उसके पुत्र बृहस्पति का भी सभी स्थानों पर आदर-सम्मान होने लगा। उस दिन वितंड ने बृहस्पति से कहा–"महाशय, आज हम लोग इस गाँव के आस्थान कवि का चुनाव कर रहे हैं। आप जैसे विद्वानों के समक्ष यदि यह चुनाव हो जाय तो हमें बड़ा ही संतोष होगा। इसलिए उस

सभा में आप को भी उपस्थित रहना होगा। यों वितंड ने बृहस्पति का स्वागत किया और अपने साथ सभा में ले गया।

आस्थान कवि का पद पाने के लिए छे व्यक्ति आगे आये। उनमें दो ही व्यक्ति आशु रूप में कविता सुना सकते थे। उनमें एक अपने रचित तीन काव्य साथ लाया था। उस कवि को देख वितंड ने अचानक पूछा—"क्या तुम अंबर तो नहीं हो?" उस व्यक्ति ने स्वीकृति सूचक सर हिलाया।

"अगर तुम अंबर हो तो आस्थान कवि के पद के लिए तुम्हें कम से कम पांच काव्य रचे रहने चाहिए था।" यों कहते वितंड ने दूसरे कवि को आस्थान कवि के पद पर चुन लिया। बृहस्पति ने इस विचित्र चुनाव पर विस्मय में आकर पूछा— "महाशय, क्या इसका नाम अंबर है? तब तो इसका दोष ही क्या है?"

इस पर वितंड ने उसे समझाया— "'अंबर' एक व्यक्ति का नाम नहीं, एक जाति का नाम है। उस जाति के लोगों ने यह घोषणा करते यह नाम अपने लिए रख लिया था कि वे लोग आसमान से टपक पड़े हैं। उन लोगों ने यह भी बताया था कि विद्या पाने की योग्यता उन्हीं लोगों को है और अन्य लोगों को मेहनत करके जिंदगी बसर करनी है। उन लोगों ने राजाओं का आश्रय प्राप्त किया और कहा कि अन्य जातिवालों को
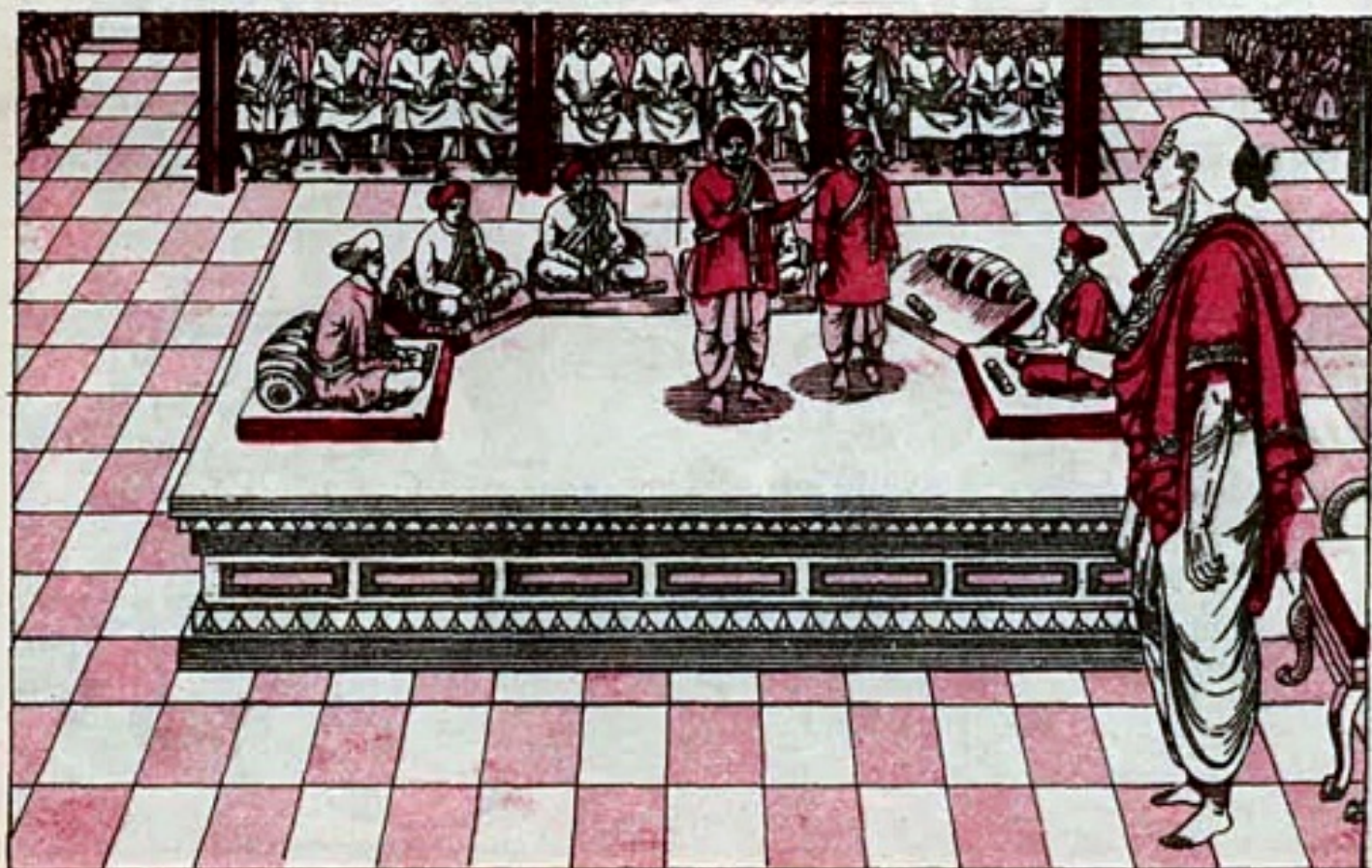
उनकी जाति की पूजा करनी है। कुछ जातिवालों को उन लोगों ने अस्पृश्य घोषित किया। जनता को नाना प्रकार से सताया। थोड़े समय बाद राज्य में भारी परिवर्तन हुए। जनता ही शासक बनी। उस समय से अंबर लोगों पर अनेक प्रतिबंध लगाये गये। आज के अंबरों में ऐसा कोई अहंकार नहीं है। मगर उनके पूर्वजों ने जो भूल की थी, इस कारण उनके वंशजों को सदा के लिए कष्ट उठाने पड़ रहे हैं।"

इसके बाद बृहस्पति ने एक वर्ष तक देशाटन किया, लोक ज्ञान प्राप्त कर घर लौटा और अपने पिता द्वारा संचालित गुरुकुल का आचार्य बना।

एक दिन बृहस्पति ने अपने शिष्यों को गिलहरी की श्रद्धा-भक्ति की कहानी सुनाते हुए समझाया कि रामचन्द्रजी जिस वक्त समुद्र पर सेतु बना रहे थे, तब गिलहरी की भक्ति पर प्रसन्न हो उन्होंने उसकी पीठ पर अपनी उंगलियाँ फेर दीं। उन उंगलियों की धारियाँ आज भी गिलहरी की जाति में पाई जाती हैं।

इस पर एक शिष्य ने आपत्ति उठाते हुए कहा—"आचार्यवर, समाज के लक्षण किसी जाति को प्राप्त होते हैं, पर कृत्रिमपूर्वक प्राप्त होनेवाले लक्षण कैसे देखे जा सकते हैं? उदाहरण के लिए मेरे पिताजी के भाल पर बचपन में एक घाव हो गया था। उसके भरने पर वहाँ बहुत बड़ा दाग रह गया, मगर वह दाग हमारे भाइयों में किसी को भी प्राप्त नहीं हुआ।"

इस पर बृहस्पति ने मुस्कुराकर कहा—"मैंने जो कहानी सुनाई, उसका मर्म यह नहीं है। गिलहरी पर धारियाँ दिखाई देती हैं, मगर मानव जाति में एक जाति के द्वारा किये गये उपकार तथा अपकार शाश्वत रूप से अपना अज्ञात प्रभाव छोड़ जाते हैं।" इन शब्दों के साथ बृहस्पति ने अपने द्वारा प्रत्यक्ष देखी गयी महाबली की चरणपूजा तथा अंबर की कहानियाँ सुना दीं।

ईर्ष्या

एक गाँव में छतरसिंह और सुजानसिंह नामक दो किसान थे। छतरसिंह गरीब किसान था और सुजान धनी किसान।

एक बार छतरसिंह ने अपने खेत में जमीकंद बोया। उस साल इतनी अच्छी फ़सल हुई, कि कंद हाथी जैसा बड़ा निकला। उसने उसे ले जाकर राजा को भेंट दी। उस विशाल कंद को देख राजा विस्मय में आ गया और उसे बहुत सारा धन उपहार में दे दिया। यह बात सुनने पर सुजान के मन में छतरसिंह के प्रति ईर्ष्या पैदा हुई। उसने सोचा कि हाथी जितने बड़े कंद के भेंट देने पर राजा ने इतना बड़ा इनाम दिया, अगर राजा को हाथी ही भेंट दे तो न मालूम कितना बड़ा इनाम देगा? यों सोचकर उसने एक हाथी ख़रीदा और राजा को भेंट में दिया।

राजा ने मंत्री से पूछा—"इसे कैसा इनाम दिया जाय?"

"महाराज, जो व्यक्ति हाथी को ही भेंट में दे सकता है, उसे धन किसलिए? हाथी जितना जो बड़ा कंद है, उसे देकर भिजवा दीजिए।"

राजा ने छतरसिंह द्वारा प्राप्त हाथी जितना बड़ा कंद सुजानसिंह को इनाम में दे दिया।

नींद की खुमारी

कृषक मजदूर जगन्नाथ के यहाँ कई वर्ष बाद एक लड़का हुआ। जगन्नाथ ने उसका विश्वनाथ नामकरण किया और बड़े ही लाड़-प्यार से पाला-पोसा। ज्यों ज्यों विश्वनाथ बड़ा होता गया त्यों त्यों वह अपने बाप के सभी कामों में सहयोग देता गया।

लेकिन विश्वनाथ में एक बुरी आदत थी। वह बड़ी देर से जागता था, निद्रा से जागने पर वह अपने पिता के वास्ते खेत पर खाना ले जाता और खेत का काम बड़ी लगन से करता।

अपने पुत्र की मेहनत से जगन्नाथ प्रसन्न तो था, पर जो सुबह नहीं जागता, उसे कौन काम देगा? उसकी मृत्यु के बाद विश्वनाथ की क्या हालत होगी! इस डर के मारे जगन्नाथ ने अपने पुत्र में सवेरे जागने की आदत डालने की कोशिश की। मगर जगन्नाथ के सारे प्रयत्न बेकार गये। जगन्नाथ के लिए अपने पुत्र के भविष्य की समस्या चिंता का कारण बनी। वह बड़ी मेहनत करके काम करता, पर एक पाई भी बचा न पाता था। उसके जीवित रहते विश्वनाथ का समय जैसे-तैसे कट जाएगा, मगर इसके बाद तो विश्वनाथ को अपने पैरों पर खड़ा होना होगा सो कैसे? इसी चिंता से जगन्नाथ ने अपने साले को विश्वनाथ का वृत्तांत सुनाकर दुख प्रकट किया।

उन्हीं दिनों में जगन्नाथ को किसी काम पर एक सप्ताह के लिए पड़ोसी गाँव में जाना पड़ा। वह अपने पुत्र को अपने साले के घर छोड़ चला गया।

विश्वनाथ जिस दिन अपने मामा के घर पहुँचा, उसके तीसरे दिन उसके घर में एक चोरी हो गई। सवेरे-सवेरे विश्वनाथ

गुरुचरण सिंह

के मामा और मामी दोनों काम पर चले गये थे। विश्वनाथ के अकेले घर में रहते वक़्त यह चोरी हो गई थी।

विश्वनाथ के मामा ने उससे कहा– "दिन दहाड़े तुम्हारे रहते घर में चोरी हो गई है। यह चोरी तुम्हारी आँख बचाकर कैसे हो सकती थी? तुमने ही चोरी की होगी।" अड़ोस-पड़ोस के लोगों ने भी यही सोचा कि विश्वनाथ ने ही चोरी की होगी।

विश्वनाथ ने कई प्रकार से समझाया कि वह चोरी की बाबत कुछ नहीं जानता, वह तो सो रहा था। पर शारीरिक मेहनत करके जीनेवाले धूप चढ़ने तक सोता रहा, इस पर किसी ने भी यक़ीन न किया। चोर कहलाने के कारण विश्वनाथ को बड़ा दुख हुआ और वह अपने पिता का इंतज़ार करने लगा। दो-तीन दिन बाद जगन्नाथ लौट आया, अपने पुत्र पर चोरी का इलजाम लगाने के कारण उसे बड़ा क्रोध आया। वह यह कहते अपने बेटे को घर ले गया कि मेरा पुत्र कभी भी चोर नहीं हो सकता, तुम लोग झूठ-मूठ उस पर इलजाम लगा रहे हो। पर जगन्नाथ की बातों का उसके साले ने कोई उत्तर नहीं दिया।

मगर आश्चर्य की बात यह थी कि दूसरे दिन जगन्नाथ ने नींद से जागते ही देखा कि उसका बेटा पहले ही जाग गया है। जगन्नाथ को पहले आश्चर्य हुआ, तब उसने साले की चाल को समझ लिया। वह कई तरह से कोशिश करके भी अपने बेटे की नींद की खुमारी को छुड़ा न पाया। उसे उसके साले ने छुड़वा दिया। इस पर जगन्नाथ ने अपने साले के प्रति कृतज्ञता प्रकट की।

"देखते हो न, बहनोईजी! मुझे तुम्हारे बेटे की इस छोटी-सी आदत को छुड़ाने के लिए कैसा इलजाम लगाना पड़ा? इसीलिए कहा गया है कि पौधे के होते जो नहीं झुकता, उसे पेड़ के बनने पर झुकाना कठिन है।" साले ने समझाया।

तोते की बातें

एक गाँव में एक बूढ़ी थी। उसके पास थोड़ी-बहुत संपत्ति थी। उसके एक नातिन थी। नातिन को बूढ़ी ने कड़े नियंत्रण में रखा। वह घर से बाहर जाकर बच्चों से खेल नहीं सकती, दूसरे घरों के बच्चे भी उसके साथ खेलने घर के अन्दर नहीं आ सकते थे।

इस कारण नातिन को वह घर जेलखाना जैसे प्रतीत होने लगा। उस घर में बूढ़ी के साथ एक तोता भी था। नातिन की उम्र के बच्चे जब स्वेच्छापूर्वक किलकारे मारते, हँसते-कूदते, खेलते तब उन्हें देख नातिन को अपनी नानी पर बड़ा क्रोध आ जाता। मगर वह बूढ़ी नानी से इतना डरती थी कि उसके आगे मुँह तक खोल न पाती थी। देखने में वह बड़ी भोली लड़की लगती थी। जब बूढ़ी घर पर न होती, तब वह क्रोध के मारे प्रकट रूप में कहा करती थी—"यह बूढ़ी मर जाय तो क्या ही अच्छा होगा।"

ये बातें बराबर तोता सुनता रहा। तोता भी उन बातों को वैसे ही रटने लगा। एक दिन बूढ़ी के सामने ही तोते ने कह दिया—"यह बूढ़ी मर जाय तो क्या ही अच्छा होगा।"

तोते के मुँह से ऐसी बातें सुन बूढ़ी चकित रह गई। उसकी समझ में न आया कि चौबीसों घंटे पिंजड़े में रहनेवाले तोते ने ऐसी बातें कैसे सीख लीं? क्योंकि उसका विश्वास था कि उसकी नातिन के मुँह से कभी ऐसी बातें निकल भी नहीं सकतीं। अलावा इसके उसके अतिरिक्त उस बच्ची का कोई सहारा भी तो नहीं। ऐसी हालत में वह क्यों ऐसी बातें कहेगी?

एक दिन नानी से बात करने के लिए पड़ोसी बूढ़ी औरत आ पहुँची। दोनों

मंगला प्रसाद

आराम से बैठकर इधर-उधर की बातें कर ही रही थीं कि अचानक तोता बोल उठा–"यह बूढ़ी मर जाय तो क्या ही अच्छा होगा?" ये बातें सुन पड़ोसी बूढ़ी नाराज़ होकर बीच में ही उठकर चली गई। इस पर नानी को बड़ा दुख हुआ और उसने अपने लिए यह अपमान की बात समझी।

नानी ने निश्चय कर लिया कि कोई ऐसा उपाय करना चाहिए जिससे आइंदा तोते के मुँह से ऐसी बातें न निकले। नानी के घर के निकट ही एक पंडित थे। उनके घर में भी एक तोता था। इस कारण बूढ़ी ने सोचा कि पंडितजी तोतों के बारे में ज़्यादा जानकारी रखते होंगे।

बूढ़ी ने पंडितजी के घर जाकर पूछा– "पंडितजी! मेरे तोते ने बुरी बातें मुँह से निकालना सीख लिया है। मेरे घर कोई भले आदमी आये तो न मालूम यह तोते क्या कह डालेगा, इसलिए कृपया आप उसके मुँह से अच्छी बातें निकलने का कोई उपाय हो तो बतला दीजिए।"

"यह तो कोई कठिन बात नहीं है। हमारा तोता तो बड़ी अच्छी बातें करता है। उसके मुँह से एक भी गलत शब्द नहीं निकलता। चाहे तो तुम हमारे तोते को तुम्हारे तोते के पिंजड़े में चार-पाँच दिनों के लिए रख लो। हमारे तोते से तुम्हारा तोता अच्छी बातें सीख लेगा।" पंडितजी ने बूढ़ी को समझाया।

इसके बाद बूढ़ी ने पंडितजी के तोते को लाकर अपने तोते के साथ उसी पिंजड़े में रखा। तब जाकर बूढ़ी को लगा कि उसके सिर से बहुत बड़ा बोझ उतर गया है।

पर उसी वक़्त घर के तोते ने नये तोते को देख आँखें चमकाते कहा–"यह बूढ़ी मर जाय तो क्या ही अच्छा होगा।"

दूसरे ही क्षण पंडितजी का तोता बिना झिझक के चिल्ला उठा–"तथास्तु!"

बूढ़ी का क्रोध उमड़ पड़ा। उसने पिंजड़ा खोला, दोनों तोतों को मुक्त करते शाप दिया–"जाओ, कहीं मर जाओ।"
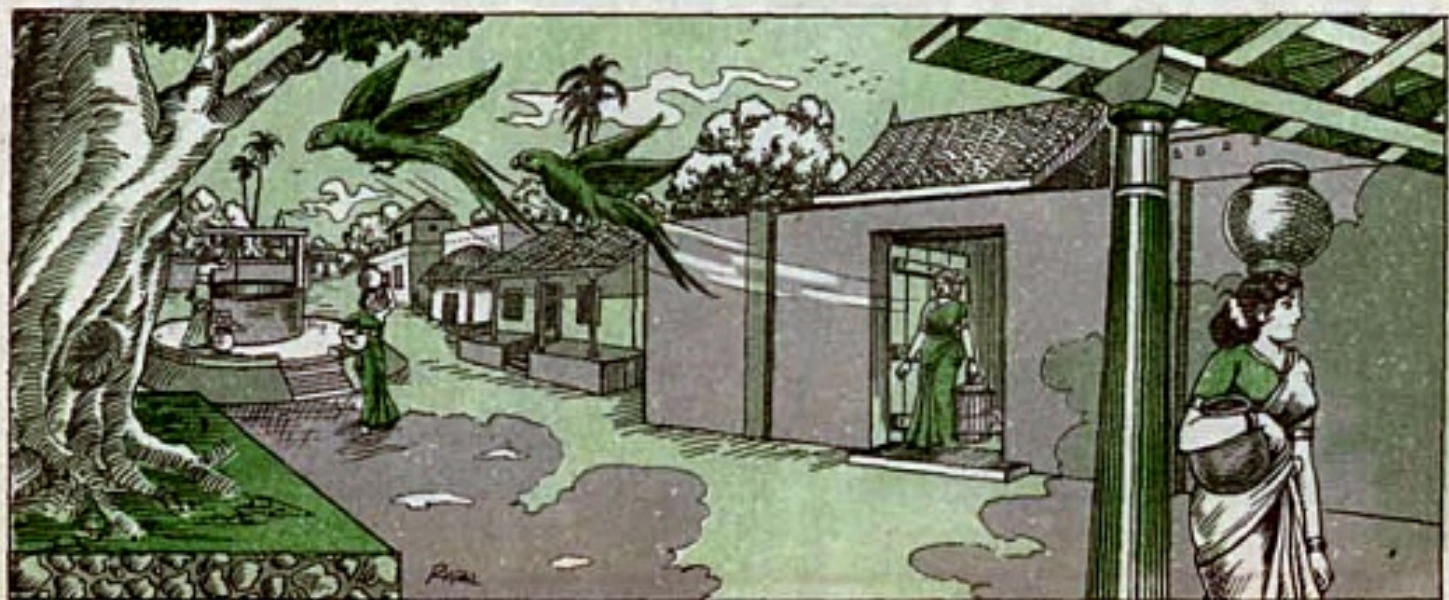
जो दगा खा गये

एक गाँव में रामनाथ और सोमनाथ नामक दो लखपति थे। दोनों के घर विवाह योग्य कन्याएँ थीं। दोनों ने एक दूसरे से गुप्त रखकर अपनी कन्याओं का विवाह नगर के लखपति सीताराम के पुत्र के साथ करना चाहा, इसके वास्ते गुरुनाथ नामक एक दलाल को नियुक्त कर प्रत्येक व्यक्ति ने दलाली के रूप में पाँच-पाँच हज़ार रुपये दिये।

परंतु इसके बाद थोड़े समय तक गुरुनाथ का कहीं पता न चला। दोनों ने दरियाफ़्त किया तो आख़िर मालूम हुआ कि गुरुनाथ अपनी कन्या का विवाह नगर के लखपति सीताराम के पुत्र के साथ कर रहा है।

दोनों ने पूछा–"तुमने तो हमें दगा दिया, ऐसा क्यों?" उसने उत्तर दिया–"मैं क्या जानता था कि लड़के और लड़की ने आपस में प्यार किया है, आप के रुपयों के लोभ में पड़कर मैं यह विवाह कैसे तोड़ सकता था?"

ईश्वर का अनुग्रह

जग्गूसिंह नामक एक चोर जब भी चोरी करने निकल पड़ता तब शिवालय में जाकर ईश्वर को प्रणाम करता, अगर उसका काम निर्विघ्न संपन्न होता तो वह यही सोचता कि यह सब ईश्वर का अनुग्रह है। उसके कार्य में कभी विघ्न न पड़ा।

लेकिन एक दिन जग्गू एक अमीर के घर सेंध लगाते पकड़ा गया। अमीर ने अपने नौकरों द्वारा जग्गू को खूब पिटवाकर छोड़ दिया। इससे शिवजी के प्रति जग्गू का विश्वास जाता रहा। उसने शिवालय में जाकर परिहासपूर्वक क्रोध भरे शब्दों में कहा–"हे मायावी भगवान! तुम पर मैंने विश्वास किया तो मुझे दगा दिया है।"

उसी दिन कोई साधू अपने शिष्यों के साथ उस गाँव में आ पहुंचा। चारों तरफ़ के गाँवों के लोग उस साधू की देवता की भांति पूजा करने लग। इसे देख जग्गू का भी विश्वास उस साधू पर जम गया। इसलिए उसने चोरी करने निकलते वक़्त शिवालय में न जाकर साधू के पास जाकर कहा–"महात्मा! में जिस काम पर जाता हूँ, उसे सफल बना दो।"

"अच्छी बात है, भक्त! तुम्हारा काम सफल होगा।" साधू कहा करता था।

एक दिन जग्गू को मालूम हुआ कि साधू पड़ोसी गाँव के एक अमीर के घर पूजा करने जा रहा है। इसलिए साधू के निकलने के पहले ही जग्गू उसके पास पहुँचा, उसे प्रणाम करके साधू का आशीर्वाद प्राप्त किया।

जग्गू ने निश्चय किया कि साधू जिस धनी के घर पूजा करने जा रहा है, उसी धनी के घर पहुँच जाय, उस वक़्त सब लोग सो रहे थे। साधू के शिष्य भगवान के

किरण कुमारी

कमरे के सामने लेटे हुए थे और कमरे के किवाड़ खुले हुए थे।

जग्गू ने सीधे भगवान के कमरे में प्रवेश किया। तभी साधू एक पोटली के साथ उसके सामने आकर बोला–"हे मेरे भक्त! तुम डरो मत! मैं जानता था कि आज तुम यहाँ पर आ जाओगे। मैंने अपनी दिव्य दृष्टि से देखा है। भगवान का अलंकार किये गये गहने हैं ये। इन्हें लेकर तुम शीघ्र चले जाओ।"

साधू के मुँह से ये शब्द सुनने पर जग्गू की खुशी का ठिकाना न रहा। साधू के हाथ से गहनों की पोटली लेकर वह उसके चरणों पर गिर पड़ा और बोला–"महात्मा! आप ही सचमुच देवता हैं।" ये शब्द कहकर जग्गू चला गया।

धनी के घर से लौटते वक़्त जग्गू शिवालय के पास रुक गया और मजाक़ भरे स्वर में बोला–"देखा, मेरे देवता ने मेरी रक्षा करके मेरी सहायता की है। तुम किसी काम के न रहे।"

दूसरे दिन रात को साधू ने अपने शिष्यों के साथ आकर जग्गू के घर पर हमला किया और गहने लूटकर भाग गया।

सवेरे पड़ोसी गाँव के धनी के दो नौकर आये और जग्गू को पकड़ ले गये। जग्गू का कलेजा कांप उठा। उसने रास्ते में भगवान के प्रति अपने मन में प्रणाम करके कहा–"भगवान, इस एक बार मेरी रक्षा करोगे तो मैं आइंदा चोरी करना बंद कर दूंगा।"

जग्गू धनी के घर पहुँचा ही था तभी धनी को राजभटों के द्वारा समाचार मिला कि साधू गहनों के साथ भागते पकड़ा गया है। फिर क्या था, जग्गू को निरपराध मानकर छोड़ दिया गया।

धनी के घर से लौटते जग्गू ने शिवालय के पास रुककर कहा–"भगवान, तुमने मेरी रक्षा की। तुम्हारी इस कृपा को मैं कभी भूल नहीं सकता।" इन शब्दों के साथ उसने बार-बार प्रणाम किया।

पक्षपात

प्राचीन काल में विजयपुर पर राजा अमरसिंह शासन करता था। उसके वीरसिंह तथा शूरसिंह नामक दो पुत्र थे। अमरसिंह की मृत्यु के बाद वीरसिंह राजा बना। शूरसिंह अपने बड़े भाई के प्रति अपार श्रद्धा-भक्ति रखता था और वह राज्य के शासन में पूर्ण सहयोग देता रहा।

उन दिनों में अचानक वीरसिंह के सेनापति का देहांत हो गया। उस पद पर अपने भाई को नियुक्त करने का संकल्प कर वीरसिंह ने अपना विचार मंत्री के सामने रखा।

मंत्री ने सुझाव दिया–"महाराज! सेनापति की नियुक्ति में हमारे देश का एक रिवाज है। युद्ध विद्याओं में सफल निकलनेवाले व्यक्ति को ही सेनापति के पद पर नियुक्त करना होगा। इस नियम का उल्लंघन करना उचित न होगा।"

ये शब्द सुनने पर वीरसिंह बड़ा हताश हो गया। वीरसिंह के मन में यह पूर्ण विश्वास न था कि युद्ध विद्याओं की प्रतियोगिताएँ चलाने पर शूरसिंह निश्चय ही सफल निकलेगा।

"महाराज! यह तो बहुत ही छोटी-सी बात है। आप स्पर्धाएँ चलाइए। शूरसिंह उनमें जरूर सफल निकलेगा।" मंत्री ने सलाह दी। विवश होकर वीरसिंह ने सेनापति के पद के वास्ते स्पर्धाएँ चलाने की स्वीकृति दी। इसके बाद सारे राज्य में यह ढिंढोरा पिटवा दिया गया कि सेनापति के पद के वास्ते युद्ध-विद्याओं की प्रतियोगिताएँ चलाई जायेंगी, जिनमें कोई भी युवक भाग ले सकता है।

विजयपुर में सुधन्वु नामक एक युवक था जो युद्ध विद्याओं में कुशल था। जब लोगों को पता चला कि सुधन्वु भी

यमुना दत्त तिवारी

प्रतियोगिताओं में भाग ले रहा है, तब इसके पूर्व उसके हाथों में हारे हुए युवकों ने प्रतियोगिताओं में भाग लेने से अपने नाम वापस ले लिये । आखिर सुधन्वु अन्य सभी प्रतिभागियों को हराकर शूरसिंह के साथ अंतिम प्रतियोगिता के लिए सामने आया ।

प्रथम दिन दोनों के बीच मल्लयुद्ध हुआ । दोनों समान प्रतीत हुए ।

दूसरे दिन धनुर्विद्या का प्रदर्शन हुआ । उसमें सुधन्व शूरसिंह से अधिक प्रवीणता दिखा सका । इसे देख वीरसिंह का दिल बैठ गया । लेकिन मंत्री ने राजा को हिम्मत बंधाते हुए कहा–"महाराज! आप को निराश होने की कोई ज़रूरत नहीं है, कल की प्रतियोगिता में अवश्य शूरसिंह की विजय हःगी ।"

अंतिम दिन खड्ग युद्ध की प्रतियोगिता हुई । युद्ध जब जोरों पर था, तब सुधन्वु का खड्ग टूट गया । शूरसिंह की जीत हुई । सुधन्वु ने समझ लिया कि उसके प्रति अन्याय हुआ है ।

सुधन्वु ने सोचा कि न्यायशील राजा वीरसिंह उसके प्रति जो अन्याय हुआ है, उसका समर्थन करेगा, इस आशा से उसने वीरसिंह की ओर देखा । मगर वीरसिंह इस खुशी में डूबा हुआ था कि उसका छोटा भाई विजयी हो गया है और सेनापति का पद उसे ही दिया जा सकता है ।

इस बार सुधन्वु ने यह सोचकर मंत्री की ओर देखा कि कम से कम मंत्री ही सही, उसके प्रति जो अन्याय हुआ है, उसे घोषित कर उसके प्रति न्याय करेगा, पर मंत्री ने अपनी दृष्टि दूसरी ओर कर ली ।

अब सुधन्वु ने यह सोचकर जनता की ओर देखा कि जनता उसके प्रति न्याय करेगी । मगर अपने राजा के छोटे भाई की विजय को अपनी विजय मानकर जनता हर्षध्वनि करने लगी थी । जनता को इस बात की चिंता न थी कि सुधन्वु के प्रति न्याय हुआ है अथवा अन्याय ।

सुधन्वु ने हालत जान ली और घर की ओर चल पड़ा ।
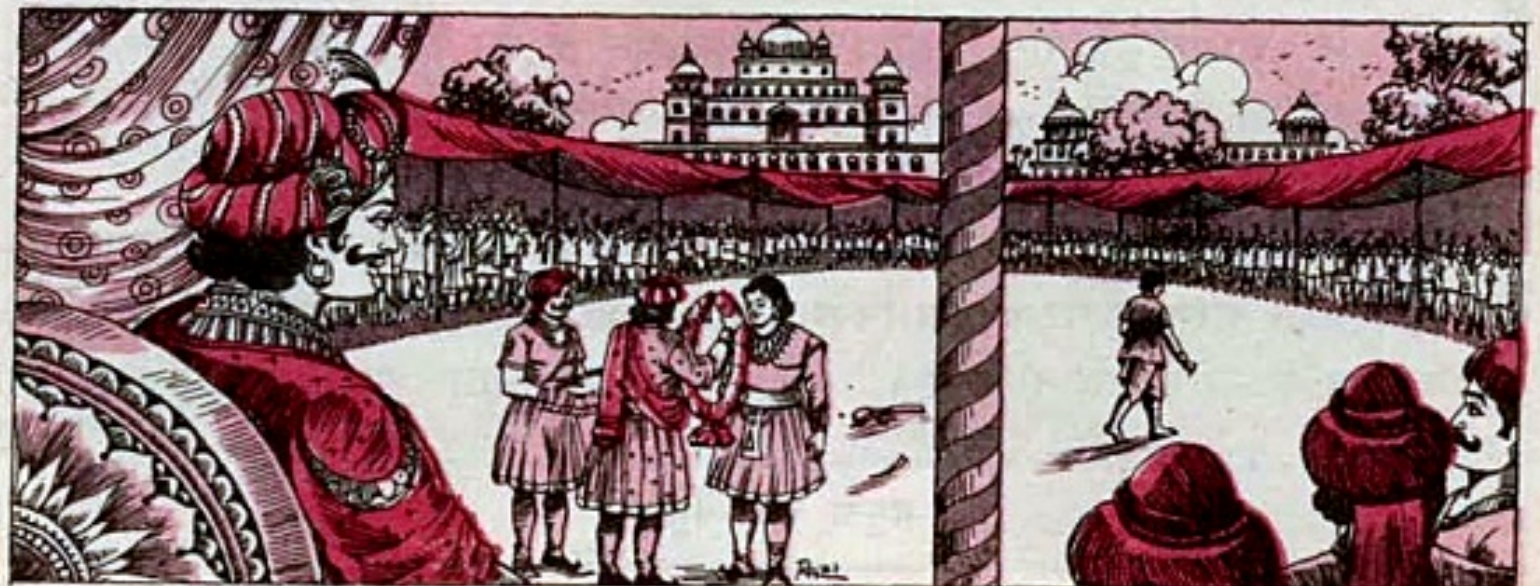
वीर हनुमान द्रुत गति के साथ जाकर चन्द्रसेना के भवन में पहुँचा। वह भवन हरे रंग की शिलाओं तथा अद्‌भुत शिल्प के साथ निर्मित था। अंधकार में भी वह भवन हरे रंग का प्रकाश फेंक रहा था। जहाँ-तहाँ दीवारों में बिठाये गये लाल मणि लाल प्रकाश को फैला रहे थे।

भवन के मुख्य द्वार पर राक्षसों का पहरा न था। सब लोग काली मंदिर के पास संपन्न होनेवाले उत्सव में भाग लेने चले गये थे। मगर प्रवेश द्वार के निकट चमकनेवाली अपनी लाल-लाल पुतलियों को घुमाते एक राक्षसी सर्प रेंग रहा था।

हनुमान तथा राक्षसी सर्प ने परस्पर एक दूसरे को एक ही साथ देख लिया। फिर क्या था, तत्काल सर्प फुफकारते ऊपर उठा। उसके नथुनों से धुआँ तथा ज्वालाएँ उठीं।

हनुमान को निगलने के लिए वह सर्प मुंह खोले आगे बढ़ने लगा। हनुमान सावधान हो उस राक्षसी सर्प का वध करने के लिए उछलने ही वाला था कि भवन के ऊपर से एक नारी का कोमल स्वर मिश्रित आर्तनाद उसे सुनाई दिया।

हनुमान ने दूसरे ही क्षण सूक्ष्म रूप धारण करके राक्षसी सर्प के मुँह में प्रवेश किया। उसका पेट फाड़कर महल के भीतर दौड़ गया। सारा भवन अंधकार मय था। जहाँ-तहाँ माणिक चमक रहे थे। हनुमान नारी के आर्तनादवाली दिशा

कुल्हाड़ी से तुम्हारा सिर फोड़ दूंगी। नहीं, नहीं, तुम्हारा गला दबाकर मार डालूंगी। यही तुम्हारे लिए सही सजा होगी।" इन शब्दों के साथ उसने चन्द्रसेना का कंठ कस लिया।

इस दृश्य को देखते ही हनुमान ने अपनी पूंछ बढ़ाकर खिड़की में से भीतर भेजा। कंटकी चन्द्रसेना का कंठ कस रही थी, तभी हनुमान ने कंठकी के गले को अपनी पूंछ लपेटकर कसकर खींच लिया, जिससे कंठकी के प्राण पखेरू उड़ गये।

हनुमान ने कमरे के किवाड़ों को लात मारकर तोड़ दिया और अन्दर प्रवेश करके चन्द्रसेना को साष्टांग प्रणाम किया। इसके बाद उसने संक्षेप में सारा वृत्तांत सुनाया और मैरावण के वध का उपाय बताने की प्रार्थना की।

श्रीरामचन्द्रजी का नाम सुनते ही चन्द्रसेना अपनी सारी यातनाओं को भूल गई और थोड़ी देर में सांस भरकर बोली– "हे वीर हनुमान! मैं तुम्हें मैरावण के प्राणों का रहस्य बता देती हूँ, लेकिन तुम्हें पहले मुझे वचन देना होगा! वह यह है कि मैरावण की मृत्यु के बाद तुम्हें श्रीरामचन्द्रजी को एक बार यहाँ पर लाना होगा!"

में देख ही रहा था कि उसे महल की दूसरी मंजिल पर चाबुक की मार तथा आर्तनाद भी एक साथ सुनाई दिये।

हनुमान तत्काल चन्द्रसेना के कक्ष में पहुँचा। कक्ष के किवाड़ भीतर से बंद थे। हनुमान ने खिड़की में से भीतर की ओर झांककर देखा। चन्द्रसेना उसी वक़्त होश में आ गई। तिस पर कंटकी चन्द्रसेना को चाबुक से मारते गालियाँ दे रही थी–"अरी पातकी, मैरावण मूर्खतावश तुम्हें हमारे पाताल लंका में ले आये हैं। तुम हमारे लिए दावानल सी बन गई हो। बताओ, तुमने काली माता के मंदिर में किसको भेजा है? नहीं बताओगी, तो

हनुमान ने श्रीरामचन्द्रजी को चन्द्रसेना के पास लाने का वचन दिया। चन्द्रसेना ने हनुमान को मैरावण के प्राणों का रहस्य बताया। इसके बाद थोड़ा भी बिलंब किये बिना हनुमान उस कक्ष से बाहर निकला। आसमान में उड़कर सात समुद्र के बीच में स्थित ज्वालामुखी कमल के निकट पहुंचा। धधकनेवाली ज्वालाएँ उस कमल की पंखुड़ियाँ बनी हुई थीं। हनुमान ने एक बार अग्नि देव का स्मरण किया, तदुपरांत कमल में प्रवेश करके मकर बिल तक पहुँचा।

मकर बिल में भयंकर सर्प फुत्कार कर रहे थे। पिशाचगण जोर-शोर से हुंकार कर रहे थे। हनुमान ने भयंकर रूप से सिंहनाद किया और अंधा-धुंध उन दुष्ट शक्तियों को मुट्ठी बांध पीटते हुए कराल गुफ़ा में पहुँचा। उसके आघातों से घबराकर सारी भूत शक्तियाँ भाग गईं। पर गुफा के कद की एक काली डरावनी आकृति अपने सफ़ेद दाढ़ों तथा लाल लाल आँखों के साथ हनुमान के सामने आ खड़ी हुई और विकट अट्टहास कर उठी।

"तुम कौन हो? मेरे सामने से हट जाओ।" हनुमान ने तीव्र स्वर में पूछा।

ये बातें सुन डरावनी आकृति ठठाकर हँस पड़ी और बोली—"मैं बेताल हूँ, भूत, प्रेत और पिशाचों का नेता हूँ। तुम कौन हो? यहाँ पर केवल दो ही व्यक्ति आ सकते हैं। एक तो मैरावण और दूसरे तुम। तुम मैरावण नहीं हो, तो वह दूसरा शक्तिशाली तुम्हीं होगे।"

हनुमान जोर से हँसकर बोला—"अबे बेताल, तुम्हें तो स्वेच्छापूर्वक श्मशानों में विहार करना था, इस अंधेरी गुफा में पड़े रहने की तुम्हारी दुर्गति क्यों हो गई? छी: मेरे सामने से हट जाओ। वरना तुम्हें मेरी ताक़त का परिचय देना पड़ेगा।"

बेताल परिहासपूर्वक हँसकर बोला—"मैं भी तुम्हारी उस ताक़त को तो अजमाकर देखूँ?"

इस पर हनुमान ने झट से अपनी मुट्ठी बांधकर बेताल पर प्रहार किया। उस आघात से बेताल की आँखें चकरा गईं, वह नीचे गिर पड़ा। हनुमान को प्रणाम करते हुए बोला–"भगवान हनुमान! मैं धन्य हो गया हूँ। मैंने एक छोटा-सा अपराध करके इस गुफा में पड़े रहने का शाप पाया। शिवजी ने कहा था कि आप के स्पर्श से मेरा शाप जाता रहेगा। जय वीर हनुमान की।" इन शब्दों के साथ बेताल गायब हो गया।

इसके बाद हनुमान गुफा के मध्य भाग में पहुँचा। वहाँ पर एक ऊँची शिला वेदी पर एक गोल रत्न पेटिका थी। उसके ढक्कन पर अग्नि शिखा प्रज्वलित हो रही थी। ज्यों ही हनुमान रत्न पेटिका के निकट पहुँचा, त्यों ही पचंड ज्वालाएँ उठीं और उसके चारों तरफ़ इस तरह फैल गईं जिससे उसका शरीर झुलस गया। तत्काल हनुमान ने गहरी सांस ली और उन ज्वालाओं पर प्रलय मारुत की भांति फूंक लगाई। मगर ज्वालाएँ बुझी नहीं, उल्टे और तीव्रता के साथ उसके चारों तरफ़ फैल गईं।

हनुमान ने हाथ जोड़कर अग्नि देव का ध्यान किया–"अग्नि देव! मैं आप के मित्र वायुदेव का पुत्र हूँ। मुझ पर अनुग्रह कीजिए।" फिर क्या था, उसी क्षण ज्वालाएँ बुझ गईं।

दूसरे ही क्षण रत्न पेटिका की अग्नि शिखा से ये बातें सुनाई दीं–"मारुती! मैं तुम्हें एक खास बात सुनाने के लिए ही इस तरह तीव्रता के साथ फैल गया था। यदि तुम इस रत्न पेटिका के भीतर के सारे भ्रमरों को एक साथ मार डालना चाहते हो तो तुम पाँच मुँख प्राप्त करो, अपने मुँहों से उन भ्रमरों को भीतर खींचकर चबा डालो, ये बातें भली भांति याद रखो।"

इसके बाद हनुमान ने अग्निदेव को प्रणाम किया। भ्रमरोंवाली रत्न पेटिका

को लेकर वायुवेग के साथ रामचन्द्रजी तथा लक्ष्मण के निकट आ पहुँचा। वे दोनों अभी तक असंख्य मैरावणों के साथ लड़ रहे थे। हनुमान सिंहनाद करते मैरावण के सामने आ उतरा, रत्न पेटिका को उठाकर बोला—"अरे पाताल लंकाधीश, तुम्हारे पाँचों प्राणोंवाली रत्न पेटिका अपने साथ लाया हूँ। अब भी सही, तुम अपनी दुष्टता को भूलकर रामचन्द्रजी तथा लक्ष्मण की शरण माँगो।"

अपने पाँचों प्राणोंवाली रत्न पेटिका को देख मैरावण कांप उठा। वह इस तरह व्यथा का अनुभव करने लगा, मानो चट्टानों के बीच उसका शरीर दबा जा रहा हो! वह बोला—"अरे वानर! यह तुमने क्या किया? रत्न पेटिका में मेरे प्राण जरूर हैं, मगर यह मत भूलो कि वे तुम्हारे तथा राम-लक्ष्मणों के लिए मृत्यु के दूत हैं। यदि तुमने उस पेटिका को खोल दिया, तो भ्रमर तुम्हें डंक मारेंगे। तुम्हारे शरीर में कालकूट विष भरकर तुम्हें जला डालेंगे। तुम तीनों की मृत्यु को अपने साथ ढो लाये हो। यदि अब भी सही तुम्हें अपने प्राणों के प्रति मोह है तो उस पेटिका को नीचे रख दो।"

ये बातें सुन हनुमान ठठाकर हँस पड़ा और बोला—"निद्रा में निमग्न श्रीरामचन्द्र और लक्ष्मण को अपनी माया के द्वारा यहाँ तक लाने के उपलक्ष्य में तुम्हारी मृत्यु निश्चित है। अपने मरने के पहले यदि तुम और जादू-मंत्र जानते हो तो उनका भी प्रदर्शन करो।"

हनुमान की निर्भयता पर घबराकर मैरावण चिल्ला पड़ा—"कंटकी! तुम कहाँ हो? शीघ्र चन्द्रसेना को मार डालो।"

हनुमान मंदहास करके बोला—"अरे जादूवाले मैरावण! वह कंटकी तुम से भी कहीं अधिक बुद्धिमति दुष्टा है। उसने इसके पूर्व ही चन्द्रसेना का वध करने का प्रयत्न किया। मगर उसी वक़्त उसे अपने प्राणों के साथ हाथ धोना पड़ा।"

मैरावण सारी बातें समझ गया। वह जोर से चिल्ला उठा, जो भी हथियार उसके हाथ लगा, उसका राम-लक्ष्मणों पर बाण की भांति प्रयोग करने लगा। बीच-बीच में वह अपने शरीर को स्वयं घायल बनाकर रक्त गिरा देता जिससे असंख्य मैरावण पैदा हो राम-लक्ष्मणों को घेरने लगे। इसे देख हनुमान ने शिवजी का स्मरण किया और पाँच मुख प्राप्त कर पँच मुखी हनुमान के रूप में अवतरित हुआ।

हनुमान ने पाँच मुखों के साथ एक साथ प्रलय हुंकार किया। तब रत्न पेटिका को खोला, तभी बिजली के गिरने के गर्जन की भांति लाल चमक के साथ प्रलय कालीन झंकार करते पाँच भ्रमर बाहर निकले और उसे डंकने के लिए आगे बढ़े। हनुमान ने प्रत्येक मुंह से वायु खींचकर एक एक भ्रमर को अपने दाँतों से कस लिया और एक ही साथ चबाकर थूक दिया। दूसरें ही क्षण माया मैरावण ने जमीन पर गिरकर प्राण त्याग दिये।

इस प्रकार अपने सारे दल के नष्ट होने के उपरांत भी मैरावण ने भाग जाने का प्रयत्न नहीं किया, बल्कि राम और लक्ष्मण पर विभिन्न प्रकार के आयुध एवं बाणों का प्रयोग करने लगा। इस पर रामचन्द्र ने एक महान अस्त्र का मैरावण पर प्रयोग किया जिससे उसका सर कट गया और वह पृथ्वी पर गिर पड़ा।

उसी क्षण पँचमुखी हनुमान तथा राम-लक्ष्मणों पर पुष्पों की वर्षा हुई। ब्रह्मा आदि देवता तथा शिवजी वहाँ पर आ पहुंचे। ब्रह्मा ने रामचन्द्रजी से कहा–"हे राम! इस मैरावण का जन्म कालनेमि के अंश के द्वारा हुआ है। हनुमान की मदद से उसकी मृत्यु आप के हाथों द्वारा हो गई है। हनुमान का जन्म शिवजी के अंश के द्वारा हुआ है। इसीलिए वह मैरावण के संहार के लिए आवश्यक इस रत्न पेटिका को सात समुद्रों के मध्य से ला सका है।"

इसके बाद शिवजी ने हनुमान को आशीर्वाद देकर कहा—"हनुमान, तुम्हारी शक्ति और युक्ति, बल और पराक्रम अनुपम हैं। मैरावण का वध करना साधारण बात नहीं है। उस दुर्घट कार्य को तुमने सफलतापूर्वक संपन्न किया। आज से जो व्यक्ति पंचमुखी हनुमान का स्मरण करेगा उसे भूत, पिशाच आदि के द्वारा किसी प्रकार की हानि न होगी।"

हनुमान ने उसी वक़्त अपने पंचमुखी रूप को त्याग ब्रह्मा तथा शिवजी को प्रणाम किया। इसके बाद ब्रह्मा, शिवजी तथा उनके साथ आये हुए देवताओं ने आशीर्वाद दिये कि राम और लक्ष्मण को विजय प्राप्त हो, तब वे सब चले गये।

ब्रह्मा ने वहाँ से जाने के पूर्व रामचन्द्र को समझाया कि वे पाताल लंका के राज्य का अधिपति मत्स्य वल्लभ को नियुक्त करे। रामचन्द्रजी ने बिना विलंब किये उसी वक़्त मत्स्य वल्लभ को बुला भेजा और पाताल लंका के राजा के रूप में उसका राज्याभिषेक किया।

इस कार्य के संपन्न होने के बाद हनुमान ने अत्यंत विनयपूर्वक रामचन्द्रजी से निवेदन किया और बताया कि उसने चन्द्रसेना को जो वचन दिया है, उसकी पूर्ति करने की कृपा करे। तब बोला—"रामचन्द्रजी! यदि उस चन्द्रसेना की सहायता न होती, तो मैं मैरावण के प्राणोंवाले प्रदेश का पता न लगा पाता। अपने इस कार्य की सफलता के हेतु मैंने उन्हें यह वचन दिया था कि मैरावण के संहार के बाद में आप को उनके पास अवश्य ले आऊँगा।"

रामचन्द्रजी पल भर मौन रहकर सोचते रहे, फिर सिर चालन करते बोले—"ओह, ऐसी बात है; तब तो चलो।"

रामचन्द्रजी के मुंह से ये शब्द सुनकर हनुमान अत्यंत प्रसन्न हुआ और चन्द्रसेना के कक्ष की ओर बढ़ा। रामचन्द्रजी ने मंदहास करते हनुमान का अनुसरण किया।
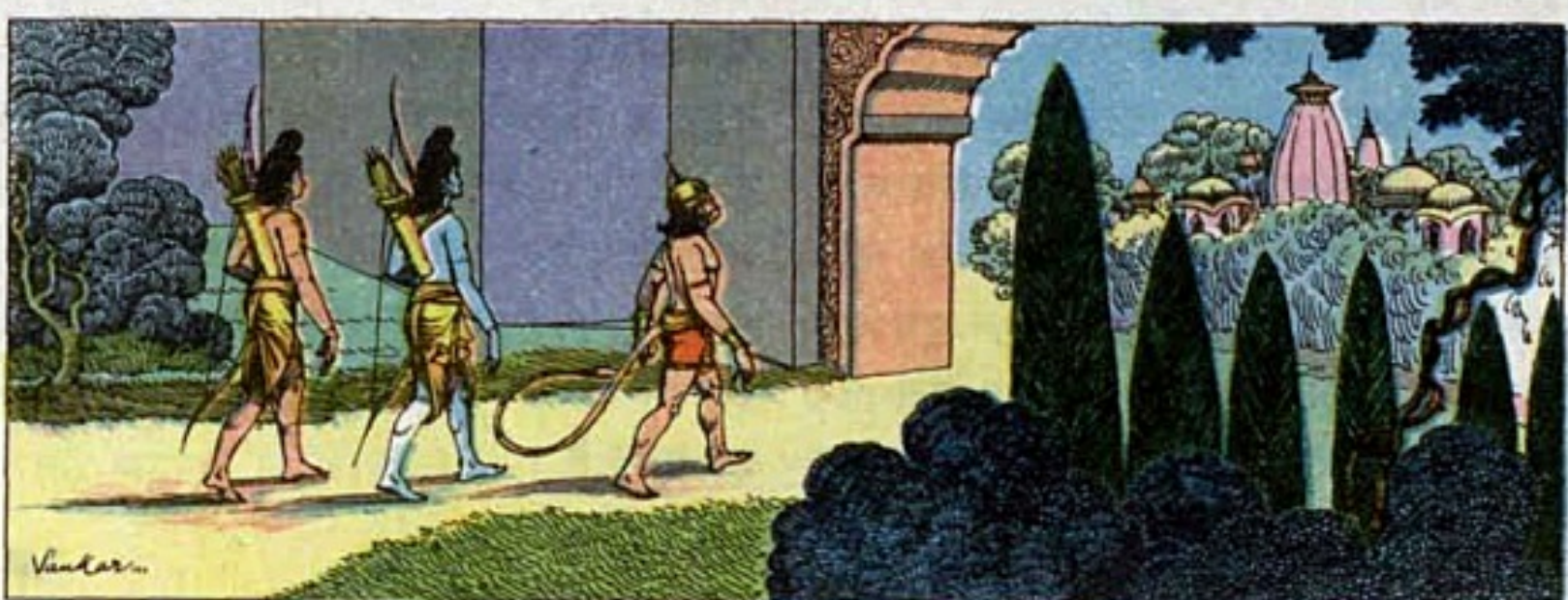
राजकुमारी ताराबाई

अपनी अवस्था से बढ़कर असाधारण साहस, वीरता तथा युक्ति का परिचय देकर ताराबाई नामक एक राजकुमारी ने अपने पिता के राज्य पर आक्रमण करके शासन करनेवाले विदेशी शासक का अंत किया था। यह उसी की कहानी है।

धोड़ा नामक राज्य का शासक राव सुर्तास था। उस राज्य पर लिल्ला नामक एक अफगान ने आक्रमण किया और क्रूरतापूर्वक शासन करने लगा। इस पर राव सुर्तास अरावली पहाड़ों में भाग गया। उसकी पुत्री ताराबाई थी। वह बचपन से ही अपने पिता के मुँह से अपने पुरखों के शौर्य एवं प्रताप की कहानियाँ सुना करती थी।

लिल्ला के क्रूर शासन से धोड़ा राज्य को मुक्त करने का राव सुर्तास ने काफी प्रयत्न किये, लेकिन आफगान लिल्ला के सैनिकों के आगे उसके सारे प्रयत्न असफल रहें।

एक विदेशी शासक के शासन में अपनी प्रजा की कठिनाइयों को देख राव सुर्तास का कलेजा दहक उठता था। ताराबाई अपने पिता की इस चिंता को देख व्यथित हो जाती। उसके मन में राज्य को वापस लेने का संकल्प दृढ़ होता गया। ताराबाई समस्त प्रकार की युद्ध विद्याओं में प्रवीण बन गई। घोड़े पर सवारी करते हुए वह बाण से अपने लक्ष्य को भेद सकती थी।

ताराबाई की सखियों को राजकुमारी का इस प्रकार पुरुषोचित विद्याओं का अभ्यास करना कदापि पसंद न था। वे ताराबाई से अकसर पूछा करतीं–"युवक की भांति इस प्रकार खड्ग-चालन और धनुर्विद्याओं में समय काटनेवाली तुम्हारे साथ कौन शादी करेगा?" इस पर वह जरा भी हताश हुए बिना जवाब दे देती–"जो महान वीर है, वही मेरे साथ विवाह करने योग्य होगा।"

ताराबाई न केवल युद्ध विद्याओं में निपुण थी, बल्कि वह एक अनुपम रूपवती भी थी। उसके सौंदर्य के बारे में सुनकर कुछ राजकुमारों ने ताराबाई के साथ विवाह करने का प्रयत्न किया। मगर ताराबाई ने अपने पिता से स्पष्ट कह दिया–"मैं उसी युवक के साथ विवाह करूंगी जो हमारे थोड़ा राज्य को शत्रु से मुक्त करेगा।"

बलवान तथा क्रूर आफगान लिल्ला के साथ युद्ध में भिड़ना साधारण बात न थी। ताराबाई के निर्णय को सुनने पर अनेक क्षत्रिय युवकों ने उसके साथ विवाह करने का प्रयत्न त्याग दिया। पर मेवाड़ का राजकुमार पृथ्वीराज निडर तथा साहसी था। उसने राव सुर्तास के पास पहुँचकर बताया कि वह आफगान लिल्ला पर हमला करने को तैयार है।
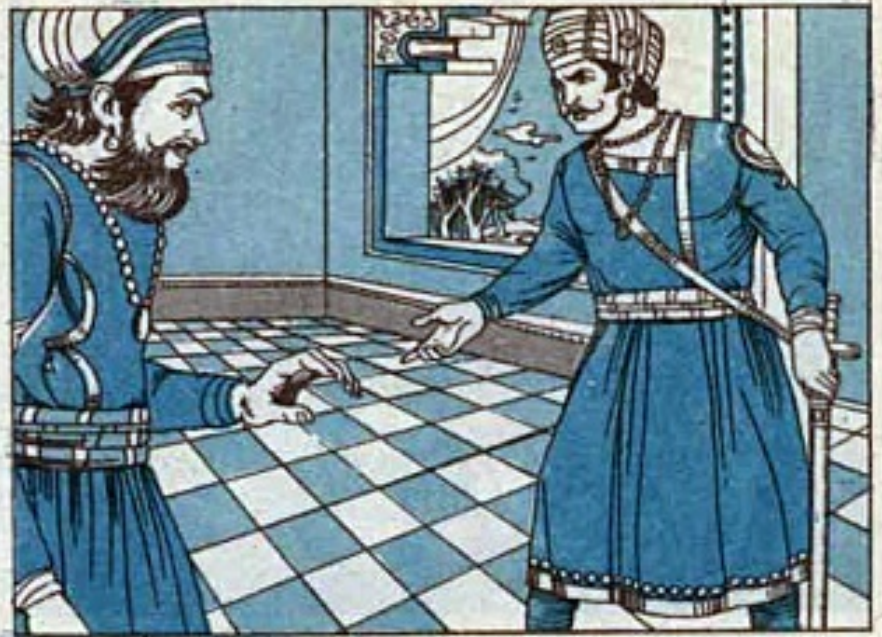
ताराबाई ने पृथ्वीराज के शौर्य और साहस के बारे में सुन रखा था। उसने हठ किया कि लिल्ला पर होनेवाले आक्रमण में वह भी भाग लेगी। पृथ्वीराज ने मान लिया। पाँच सौ जबर्दस्त योद्धाओं को साथ ले दोनों थोड़ा नगर की ओर चल पड़े।

उस वक्त थोड़ा नगर में एक बड़ा उत्सव मनाया जा रहा था। लिल्ला अपने दुर्ग के महल पर बैठकर नीचे कवायद करते जानेवाले सैनिकों को देख संतुष्ट हो सिर चालन कर रहा था।
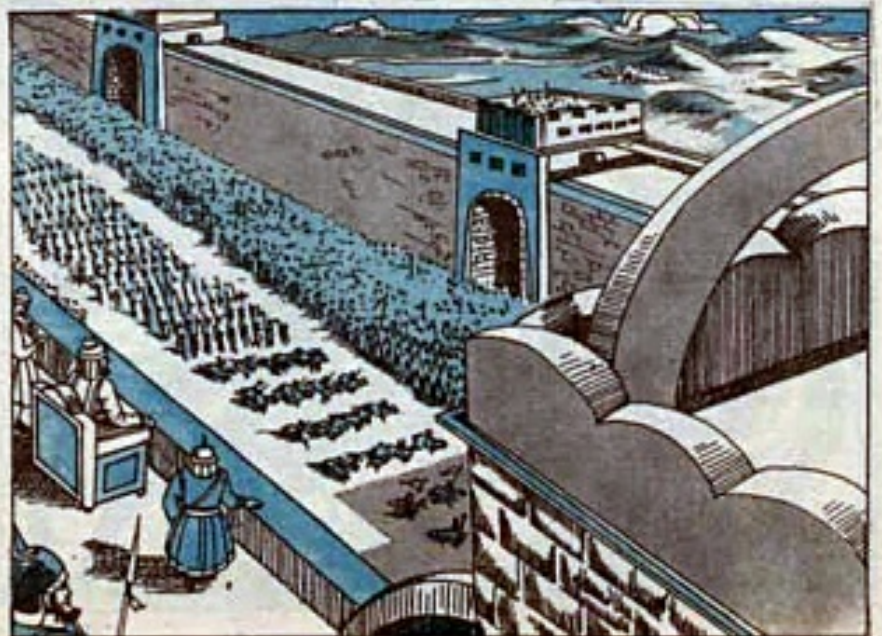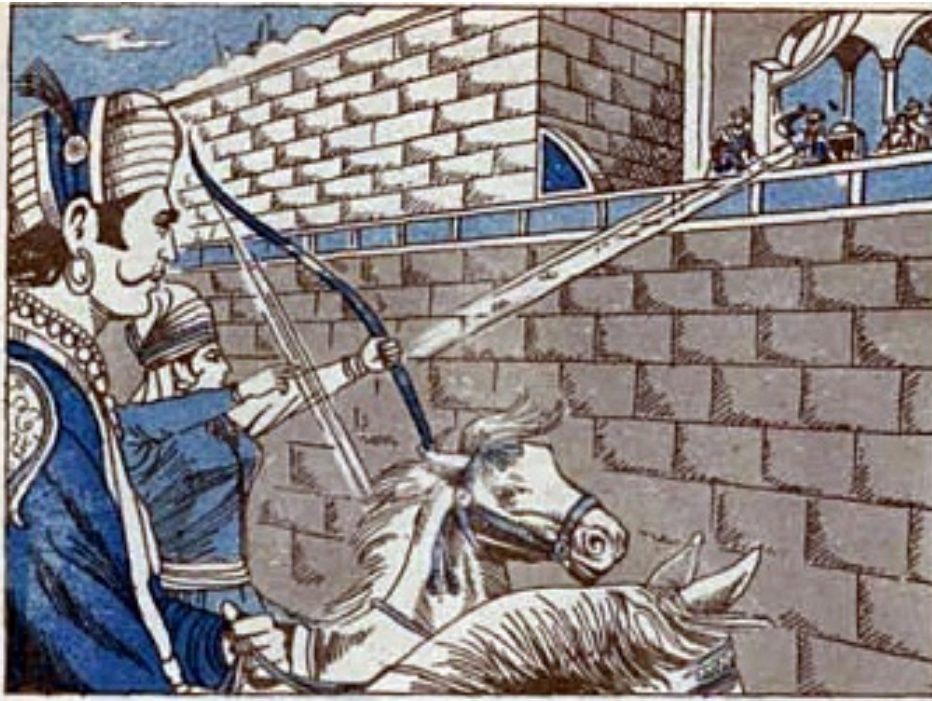
अपने सैनिकों को दुर्ग के बाहर छोड़ ताराबाई और पृथ्वीराज उत्सव की भीड़ में मिल गये। वे लिल्ला के निकट पहुँचे। लिल्ला चिल्ला उठा– "घोड़ों पर सवार ये नये लोग कौन हैं ?" उसी वक्त ताराबाई का बाण और पृथ्वीराज के द्वारा फेंका गया भाला लिल्ला से जा लगे। उसने दूसरे ही क्षण अपने प्राण त्याग दिये। ताराबाई और पृथ्वीराज दुर्ग के द्वार की ओर तेजी से बढ़े।

लिल्ला के सैनिकों ने हालत भांप ली और उन्हें रोकने के लिए दुर्ग के पहरेदार को चेतावनी दी। पहरेदार ने उनके मार्ग को रोकते हाथी को खड़ा किया। आगे के घोड़े पर स्थित ताराबाई ने तलवार से हाथी की सूंड काट डाली। हाथी भाग गया, फिर क्या था, दोनों दुर्ग के बाहर जाकर अपने सैनिकों से जा मिले।
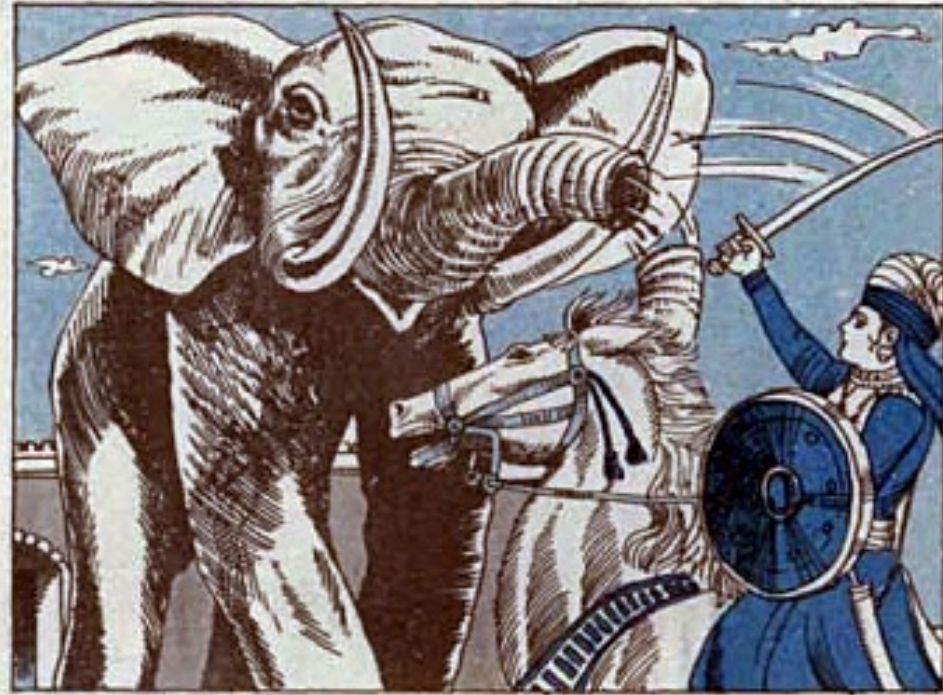
आफगान सैनिकों ने उनका पीछा किया। ताराबाई ने अपने पांच सौ सैनिकों के साथ उनका सामना किया। उस भयंकर युद्ध में आफगान सैनिक बुरी तरह से हार गये, इस प्रकार राव सुर्तास पुनः थोड़ा का राजा बना। ताराबाई और पृथ्वी राज का विवाह वैभवपूर्वक संपन्न हुआ।

कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता

कहानी का सुंदर शीर्षक देकर रु. २५ जीतिए!

?

एक नदी के समीप में एक छोटा सा तालाब था। उसमें छोटी-छोटी मछलियाँ आराम से जी रही थीं। उनके बीच एक ही बड़ी मछली रह गई थी। वह छोटी मछलियों पर अपना अधिकार जमाया करती थी।

एक दिन छोटी मछलियों ने पूछा—"नदी में तुम्हारी समता कर सकनेवाली कई बड़ी-बड़ी मछलियाँ हैं, वहाँ पर क्यों नहीं जातीं?"

अगली बार जब नदी में बाढ़ आई, तब बड़ी मछली बाढ़ के पानी में तैरते नदी के भीतर चली गई। वहाँ पर वह विश्राम कर रही थी, तब दो उससे भी बड़ी मछलियाँ उधर से गुजरीं और गरजकर बोलीं—"तुम कौन हो? हमारे रास्ते से हट जाओ।" इस पर वह मछली डर गई और अंधेरा फैलने तक एक पत्थर के नीचे छिपी रही, जब उसे भूख लगी, तब आहार की खोज में चल पड़ी। इतने में एक दाढ़ोंवाली मछली उसकी पूँछ पकड़कर उसे खाने को हुई। उस वक़्त उन पर से एक नाव चली गई। उस हलचल में वह मछली अपनी जान बचाकर बाढ़ के पानी के घटने के पहले ही तालाब के जल में भाग आई। इसके बाद फिर कभी उसने छोटी मछलियों पर अपना अधिकार नहीं जमाया।

★ ★ ★

उपर्युक्त कहानी के लिए बढ़िया शीर्षक कार्ड पर लिखकर, निम्न लिखित पते पर भेजें—"कहानी शीर्षक-प्रतियोगिता", चन्दामामा २ & ३, आर्काट रोड, मद्रास-६०००२६

कार्ड हमें जून १० तक प्राप्त हों और उसमें फोटो-परिचयोक्तियाँ न हों। इसके परिणाम चन्दामामा के अगस्त '७७ के अंक में घोषित किये जायेंगे।

अप्रैल मास की प्रतियोगिता का परिणाम: "गोबर गणेश"

पुरस्कृत व्यक्ति: **डा. कुमार विमल** १७. एम. ए. जी. हेच. लोहिया नगर, पाटना-२०

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २५)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ अगस्त १९७७ के अंक में प्रकाशित की जायेंगी।

R. Jayapalan.

★

M. Natarajan.

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्दों की हों और परस्पर संबंधित हों।

★ जून १० तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए, उसके बाद प्राप्त होनेवाली परिचयोक्तियों पर विचार नहीं किया जाएगा।

★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) २५ रु. का पुरस्कार दिया जाएगा।

★ दोनों परिचयोक्तियाँ कार्ड पर लिखकर (परिचयोक्तियों से भिन्न बातें उसमें न लिखें) निम्नलिखित पते पर भेजें: चन्दामामा फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता, मद्रास-२६

अप्रैल के फोटो-परिणाम

प्रथम फोटो: **चल मेरा घोड़ा चल!**

द्वितीय फोटो: **अबे थोड़ा धीरे से ढकेल!!**

प्रेषक: **श्रीमती कमला नारायण** २५/२५ ए. डब्लयू. ई. ए. करोल बाग, दिल्ली-५

पुरस्कार की राशि रु. २५ इस महीने के अंत तक भेजी जाएगी।

Printed by B. V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for CHANDAMAMA CHILDREN'S TRUST FUND (Prop. of Chandamama Publications) 2 & 3, Arcot Road, Madras 600 026 : Controlling Editor : NAGI REDDI

चन्दामामा के ग्राहकों को सूचना

यदि आप अपना पता बदल रहे हों, तो पांचवीं तारीख़ से पहिले ही अपनी ग्राहक-संख्या के साथ, अपना नया पता सूचित कीजिये। यदि विलम्ब किया गया, तो अगले मास तक हम नये पते पर 'चन्दामामा' न भेज सकेंगे।

आपके सहयोग की आशा है।

डाल्टन एजन्सीस, मद्रास-६०० ०२६

everest/871/PP-hn